शैक्षिक पत्रकारिता विशेषांक

भारतीय आधुनिक शिक्षा

वर्ष : तृतीय अंक : प्रथम जुलाई, 1985

भारतीय आधुनिक शिक्षा के लिए
शिक्षा शास्त्रियों,
शोध-छात्रों, प्राध्यापकों,
शिक्षकों एवं शिक्षा के क्षेत्र में
चिन्तनरत व्यक्तियों की
रचनाएं
देवनागरी लिपि में आमंत्रित हैं।

सुविधा के लिए कृपया
डबल स्पेस में टाईप की हुई
अथवा सुन्दर अक्षरों में
लिखी हुई रचना की
दो प्रतियां
भिजवाएं। रचना के अन्त में
रचनाकार के
हस्ताक्षर अवश्य हों।

रचना भेजते समय यह
अवश्य सूचित करें
कि प्रेषित रचना
अप्रकाशित/अप्रसारित है।

प्रकाशित रचनाओं पर
परिषद्
के नियमानुसार समुचित
पारिश्रमिक देने की
व्यवस्था है।

एक प्रति : 3 रुपये, त्रैमासिक
वार्षिक मूल्य : 12 रुपये
सम्पादकीय सम्पर्क : प्रधान सम्पादक, पत्रिका प्रकोष्ठ
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,
नई दिल्ली-110016

भारतीय आधुनिक शिक्षा

त्रैमासिक प्रकाशन | वर्ष : तृतीय | अंक : प्रथम | जुलाई, 1985

इस अंक के आकर्षण

सम्पादकीय

1

शैक्षिक पत्रकारिता—कुछ मूलभूत तथ्य
डा० द्वारिका नाथ खोसला

9

शैक्षणिक पत्रकारिता की अवधारणा
डा० भंवर सुराणा

13

पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा विषयक समाचार
राजेन्द्र शंकर भट्ट

17

शैक्षिक पत्रकारिता की भूमिका
डा० संजीव भानावत

20

पत्रिकाओं की भूमिका
शशी प्रभा गोयल

24

प्रादेशिक समाचार पत्र और शैक्षणिक प्रवृत्तियां
डा० मनोहर प्रभाकर

27

विद्यालयी पत्रिकाओं की समस्याएं
रवीन्द्र भारती

30

शैक्षणिक पत्र-पत्रिकाएं
राजेश माथुर
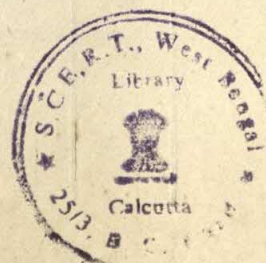
भारतीय आधुनिक शिक्षा
त्रैमासिक प्रकाशन वर्ष : तृतीय अंक : प्रथम जुलाई, 1

32

शैक्षणिक लेखन के कौशल
सत्यप्रकाश शर्मा

38

विद्यालय पत्रिका का संश्लेषण
जी० एस० जौली

45

शैक्षिक पत्रकारिता—समाचार पत्रों में लेखन के पक्ष में
डा० आर०सी० श्रीवास्तव

48

शैक्षिक पत्रकारिता में प्रशिक्षण
डा० टी० रामामूर्ति

57

भारतीय आधुनिक शिक्षा में अब तक प्रकाशित रचनाओं का विवरण

पत्रिका प्रकोष्ठ

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं की सम्पादकीय सलाहकार समिति के माननीय सदस्यगण

□□

सम्पादकीय

शैक्षिक पत्रकारिता

"शैक्षिक पत्रकारिता" भारत में एक नया विषय हो सकता है किन्तु विकसित देशों में इसकी नींव काफी गहरी है। उन्नीसवीं शताब्दी में अमेरिका के राजदूतों को अपने-अपने देशों में शैक्षिक समाचार भी भेजने होते थे और इस दायित्व को निभाने के लिए वे अनुभवी लेखक अपने साथ रखते थे। इंग्लैंड में यह परम्परा और भी पुरानी है। वहाँ सम्राट अथवा साम्राज्ञी अपने राजदूत को यह आदेश देते थे कि राजदूत शिक्षा में हो रहे प्रत्येक नवाचार की सूचना अपने देश को अवश्य भेजें। यह मात्र औपचारिकता नहीं रही होगी; यह इस बात से विदित है, कि इंग्लैंड में मानसिक रूप से अविकसित बच्चों के लिए आवश्यक कानूनी सुधार स्पेन, फ्रांस और इटली के कानूनों को ध्यान में रखकर बनाये गये। यदि इस प्रकार की रपटों ने एक ओर 'तुलनात्मक शिक्षा' को जन्म दिया तो दूसरी ओर ऐसी पत्रकारिता की भी शुरूआत की जिसके कारण "टाइम्स एजूकेशनल एप्लीमेंट" अथवा "टाइम्स हायर एजूकेशनल न्यूज़" इंग्लैंड में प्रकाशित होते हैं और 'न्यूयार्क टाइम्स' का रविवारीय संस्करण केवल शिक्षा संबंधी खबरों और पुस्तक-समीक्षाओं से भरा रहता है। इन राष्ट्रों की तुलना में अन्य क्षेत्रों की भांति हम इस क्षेत्र में भी पीछे ही हैं। भारत में कदाचित "हिन्दू" ही मात्र एक दैनिक है जिसमें एक शिक्षा-सम्वाददाता है और जिसमें शिक्षा संबंधी लेख बड़े नियम से निकलते हैं। किन्तु इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करना है। हमें न केवल शिक्षा में सबकी रुचि के लेख लिखने वाले लेखकों की एक नई पीढ़ी को जन्म देना है वरन् एक विशिष्ट पाठक-वर्ग भी पैदा करना है, जो स्तरीय शिक्षा-संबंधी खबर को पहचान सकें और उसके प्रति अपने तर्क-संगत विचार भी प्रस्तुत कर सकें। ऐसा युग आने में अभी समय लगेगा। हम उस पृष्ठभूमि के लिए केवल सामग्री प्रस्तुत कर सकते हैं जिससे भावी लेखकों को सोचने-समझने का अवसर मिल सके।

शैक्षिक पत्रकारिता के संदर्भ में अनेक शंकायें उठाई जाती हैं। लोगों का कहना है कि यह विषय अपने में स्पष्ट नहीं है। क्या यह पत्रकारिता की शिक्षा है या शिक्षा में पत्रकारिता की? वास्तव में इस संदर्भ में अभी भी काफी सोच की आवश्यकता है। हम अपने निर्दिष्ट गन्तव्य पर अभी भी नहीं पहुंच पाए हैं। इसीलिये इस विशेषांक द्वारा हम अपने पाठकों को ठीक से सोचने और अपने विचारों को परिष्कृत करने का अवसर दे रहे हैं। आशा है शैक्षिक-पत्रकारिता की दिशा में उठाया गया यह कदम हमें अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होगा।

राजेन्द्र पाल सिंह
प्रधान सम्पादक

आगामी श्रंक के आकर्षण

- ☐ प्रेमचन्द का शिक्षा संसार
- ☐ भाषायी शिक्षकों के शिक्षण का कारक विश्लेषण
- ☐ अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम
- ☐ खाना-बदोशों में शिक्षा
- ☐ नई शिक्षा नीति और टेक्नोलोजी
- ☐ ब्रेल लिपि की शिक्षण व्यूह रचना
- ☐ प्रशिक्षण के गुण
- ☐ वयस्क शिक्षा : एक ठोस कदम
- ☐ विद्यालय पत्रिका का संचालन

शैक्षिक पत्रकारिता—कुछ मूलभूत तथ्य

□ डॉ० द्वारिका नाथ खोसला

भारत में आधुनिक शैक्षिक पत्रकारिता के इतिहास का अन्वेषण एक अत्यन्त दुरूह कार्य है। हालांकि यह इतिहास लगभग सौ वर्ष पुराना है; फिर भी यह निश्चित रूप से स्वर्णाक्षरणीय नहीं है! यह सर्वविदित है कि आज से सौ वर्ष पूर्व भारतीय जन-जीवन में शिक्षा का नियंत्रण अंग्रेज़ों के हाथ में था। उनका उद्देश्य कुछ भारतीयों को शिक्षित कर साम्राज्यवाद का विस्तार करना था। अतः उन्होंने शैक्षिक पत्रकारिता पर कोई उल्लेखनीय रुचि नहीं ली। अतीत में शैक्षिक पत्रकारिता से संबंधित पत्रिकाओं पर अगर हम दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट है, कि सरकारी प्रयत्नों के अलावा कुछ निजी संस्थाओं तथा शैक्षिक संगठनों ने शैक्षिक पत्रिकाओं के प्रकाशन का उत्तरदायित्व सम्भाला हुआ था। बहुत ही विपरीत परिस्थितियों में भी कुछ उल्लेखनीय पत्र-पत्रिकाओं का लगभग नियमित प्रकाशन होता रहा।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा जयपुर में, राजस्थान विश्वविद्यालय के पत्राचार संस्थान में शैक्षिक पत्रकारिता पर 25 फरवरी से पहली मार्च 1985 तक तथा गंगटौक, सिक्किम के राज्य शिक्षा संस्थान में मार्च 25 से 29 तक दो संगोष्ठियों का आयोजन हुआ। देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों के अनेक गुणीजनों ने इस संगोष्ठी में भाग लिया। इस गोष्ठी का उद्घाटन "शैक्षिक पत्रकारिता—कुछ मूलभूत तथ्य" शीर्षक पर लिखे गए पेपर से किया गया; जिसके लेखक, अन्वेषक हैं—डा० द्वारिका नाथ खोसला। चुनांचे शैक्षिक पत्रकारिता के इतिहास को रेखांकित करना एक जटिल कार्य था अतः इस पेपर की प्रस्तुति में अनेक दिक्कतें आईं लेकिन इन गोष्ठियों में यह एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ के रूप में स्वीकृत हुआ।

आधुनिक भारतीय शिक्षा के संदर्भ में शैक्षिक पत्रकारिता की कहानी एक शताब्दी पूर्व की है। संभवतः "दि इंडियन संडे स्कूल जरनल" नामक पहली शैक्षिक पत्रिका सन् 1879 में प्रकाशित हुई। इसके बाद कुछ अन्य शैक्षिक पत्रिकाएं जैसे बंबई से निकलने वाली "दि स्टुडेण्ट्स मैगजीन" (जो बाद में 1889 में "दि फेमिली मैगजीन" में बदल गई), "दि मद्रास जरनल ऑफ एजूकेशन (1886; जिसने बाद में 1893 में "दि इंडियन जरनल ऑफ एजूकेशन" का रूप ले लिया); "दि कलकत्ता यूनिवर्सिटी मैगजीन-ए मंथली न्यूजपेपर एण्ड रिव्यू" (1894); मद्रास से "एजूकेशनल रिव्यू" (1895) आदि प्रकाशित हुईं। सब मिलाकर शिक्षा के विभिन्न पक्षों और स्कूल के विषयों से संबंधित ये मासिक पत्रिकाएं अध्यापकों, विद्यार्थियों और प्रबुद्ध माता-पिताओं को सम्बोधित होती

थी। इन पत्रिकाओं का प्रमुख लक्ष्य स्पष्ट रूप से शैक्षिक जानकारी देना ही था और इसलिए इनका प्रयोजन और कार्यक्षेत्र सीमित ही रहा।

1925 तक भारत की शैक्षिक पत्रिकाएं

वर्तमान शताब्दी के प्रथम पच्चीस वर्षों में, विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाएं प्रकाश में आईं। इनमें प्रमुख हैं—"इंडियन एजूकेशन"; भारत, बर्मा और श्रीलंका का मासिक रिकार्ड (1902, बंबई) जो लगातार 22 वर्षों तक अध्यापकों के सहायतार्थ प्रकाशित होता रहा; "दि पंजाब एजूकेशनल जरनल" (मासिक, 1905, लाहौर) जो लगातार 39 वर्षों तक प्रकाशित होता रहा; "दि कौलिजियन" (पाक्षिक, 1911, कलकत्ता) जो 19 वर्षों तक अनियमित रूप से निकलता रहा और देश में कालिज शिक्षा की प्रगति की सूचना देता रहा; "टुमारो" (मासिक, 1921 मद्रास) जिसे ग्राहकों की कमी के कारण 1922 में बंद करना पड़ा; "दि जरनल ऑफ ट्रावनकोर टीचर्स ऐसोशियेशन" (त्रैमासिक 1922, द्विमासीय—अंग्रेज़ी और मलयालम) जो एसोसियेशन के विभिन्न पहलुओं और कार्य की सूचना के साथ-साथ शिक्षण-विधि, स्कूल संगठन एवं शैक्षिक प्रगति के संबंध में सामग्री प्रकाशित करता था; "दि टीचर्स जरनल: ए जरनल आफ एजूकेशन, कल्चर एण्ड इंडिस्ट्री" (1922, कलकत्ता, आल बंगाल टीचर्स एसोसिएशन, द्विमासीय-अंग्रेज़ी तथा बंगाली) जो सेकेण्डरी स्कूल शिक्षकों के लिए अभी तक लगातार प्रकाशित हो रहा है; "एजूकेशन" (मासिक, बाद में पाक्षिक, 1922, कानपुर); "दि यू० पी० सेकेण्डरी एजूकेशन" जो सेकेण्डरी स्कूल के शिक्षकों को शैक्षणिक, शिक्षक आंदोलन, भारतीय शिक्षा की प्रगति आदि से संबंधित सामग्री देता था; "दि प्रोग्रेस आफ एजूकेशन" (पाक्षिक 1918, बाद में मासिक 1924, पूना) जिसमें शिक्षा पद्धति एवं प्रशासन से संबंधित समस्याओं पर विवेचन होता था; "इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज" (वार्षिक 1925), जिसमें विभागीय अनुसंधान अध्ययन संबंधी विवेचना होती थी; "दि इंडियन एजूकेशन" (1925 मदुराई) जो लगातार 1942 तक प्रकाशित होता रहा, आदि आदि।

इस काल की शैक्षिक पत्रिकाओं पर एक दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि सरकारी प्रयत्नों के अलावा कुछ निजी संस्थाएं तथा शिक्षक संगठन तथा संस्थाएं इन सभी पत्रिकाओं के प्रकाशन का उत्तरदायित्व संभालने के लिए आगे आईं। भले ही इनमें से कुछ पत्रिकाएं वित्तीय साधनों की कमी के कारण तथा अन्य कारणों से बंद करनी पड़ीं। किन्तु "ट्रावनकोर टीचर्स एसोसिएशन" तथा "आल बंगाल टीचर्स एसोसिएशन" जैसी पत्रिकाएँ प्रमुख रूप से उभर कर सामने आईं क्योंकि इनमें व्यावसायिक हितों के अलावा शिक्षा के क्षेत्र में किए गए कार्यों का विवरण भी प्रकाशित होता था और इसीलिए अन्य पूर्व पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री की तुलना में इन पत्रिकाओं का योगदान अधिक महत्वपूर्ण था, क्योंकि इसमें शिक्षक-संगठन की प्रगति की रोचक तसवीर ही नहीं होती थी, बल्कि शैक्षिक पत्रकारिता की प्रकृति और प्रगति का ब्यौरा और विद्यालयी शिक्षा में उसकी भूमिका का पूर्ण विवेचन प्रकाशित होता था। द्विमासीय शैक्षिक पत्रिका के रूप में भी उनका योगदान एक स्वागत योग्य कदम था। इसी प्रकार सबसे पुरानी शैक्षिक पत्रिका "दि प्रोग्रेस आफ एजूकेशन" और इसी संदर्भ में अन्य पत्रिकाओं जैसे "एजूकेशन", "एजूकेशन रिव्यू" आदि का विश्लेषण कम से कम तब और आज की शैक्षिक पत्रकारिता के कार्य-क्षेत्र परिचय और उद्देश्य की महत्वपूर्ण जानकारी एवं परिणाम प्रदान कर सकता है।

1947 तक भारत में शैक्षिक पत्रिकाएं

इन 22 वर्षों में शैक्षिक पत्रिकाएं निरंतर बढ़ती रहीं और उनमें से अनेकों शैक्षिक प्रक्रिया और पद्धति का समीचीन विश्लेषण और उसके प्रभाव को उद्घाटित करती रहीं। इनमें से कुछ, जैसे—"दि जरनल ऑफ मद्रास यूनिवर्सिटी" (1928), "दि साउथ इंडियन टीचर" (1928, मद्रास साउथ इंडियन टीचर्स एसोसिएशन) जो एसोसिएशन का माउथपीस बनने के साथ-साथ शिक्षकों के स्तर व उनके विकास की आवश्यकताओं को प्रतिध्वनित करता था। "टीचिंग" (1928, त्रैमासिक, बंबई)—शिक्षकों की समस्याओं का बारीकी से विश्लेषण करने वाली पत्रिका थी यूनिर्सिटी से संबंधित समाचार और विचारों का खुलासा करने वाली पत्रिका "बुलेटिन ऑफ दि इंटर-यूनिवर्सिटी बोर्ड आफ इंडिया (अर्द्धवार्षिक, 1929, कानपुर), "मैकमिलन्स एजूकेशन बुलेटिन" (त्रैमासिक,

1930, कलकत्ता); "मुस्लिम यूनिवर्सिटी जरनल" (त्रैमासिक, 1931); "जरनल आफ अन्नमालय यूनिवर्सिटी (अर्द्धवार्षिक 1932); "जरनल आफ दि यूनिवर्सिटी आफ बंबई" (1932); "दि कर्नाटक जरनल आफ एजूकेशन"(त्रैमासिक, 1932; दि कर्नाटक टीचर्स एसोसिएशन); "दि जरनल ऑफ ओस्मानिया यूनिवर्सिटी" (1933); "नागपुर यूनिवर्सिटी जरनल" (1935); "बंबई टीचर्स जरनल" (1935, त्रैमासिक, बंबई टीचर्स यूनियन); "दि इंडियन जरनल ऑफ एजूकेशन" (मासिक, 1936, आल इंडिया फेडरेशन आफ एजूकेशनल एसोसिएशन); "भारतीय विद्या" (अर्द्धवार्षिक, 1939; जरनल ऑफ दि भारतीय विद्या भवन); "दि इंडियन जरनल ऑफ एडल्ट एजूकेशन" एसोसिएशन के विभागीय मुखपत्र के रूप में कार्य कर रहा था; "दि बंबई यूनिवर्सिटी बुलैटिन" (त्रैमासिक, 1940); "जरनल ऑफ एजूकेशन एंड साइकॉलॉजी" (त्रैमासिक, 1943 बड़ौदा); "विश्व भारती एनल्स" (वार्षिक, 1945, द्विमासीय अंग्रेजी एवं संस्कृत); "दि एजूकेटर" (त्रैमासिक, 1946, नागपुर); "दि मोंटेसरी मैगजीन" (त्रैमासिक, 1946, पिलानी; दि एसोसिएशन ऑफ मोंटेसरी इंटरनेशनल) —एक ऐसी पत्रिका जो माता-पिताओं, शिक्षकों तथा सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के लिए थी।

प्रत्यक्षतः इस काल में मुख्य रूप से विभिन्न प्रकार की विश्वविद्यालयी पत्रिकाओं के प्रकाशन पर बल दिया गया। संभवतः इसके पीछे यही कारण रहा हो कि विश्वविद्यालय के क्रियाकलापों, उच्च शिक्षा से संबंधित समाचारों और विचारों की महत्ता और उपादेयता को अधिक से अधिक प्रकाश में लाया जाय। इस दिशा में इंटर-यूनिवर्सिटी बोर्ड ऑफ इंडिया के बुलैटिन तथा आल इंडिया फेडरेशन ऑफ एजूकेशनल एसोसिएशन तथा इंडियन एडल्ट एजूकेशन एसोसिएशन की पत्रिकाओं को एक दिशा-निर्देश देने वाली पत्रिका कहा जा सकता है, क्योंकि जैसा उनके नामों से इंगित होता है, उन्होंने शैक्षिक पत्रिकाओं को संकीर्णता से बाहर खींचकर उन्हें एक राष्ट्रीय स्वरूप दिया। इसी तरह अति व्यावसायिक पत्रिकाएं जैसे "टीचिंग", "जरनल ऑफ एजूकेशन एण्ड साइकॉलॉजी", दि मोंटेसरी मैगजीन" आदि भी खूब उभर कर सामने आईं। शिक्षक संगठन और संस्थाओं की पत्रिकाएं भी विशेष रूप से दक्षिण भारत में खूब प्रचारित-प्रसारित हुईं। फिर भी कहना न होगा कि वित्तीय साधनों की कमी, प्रचार तथा वितरण-व्यवस्था की कमी, लेखकों और संपादकों की कठिनाइयों तथा अन्य कारणों से बहुत सारी पत्रिकाएं जो स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले जन्मी थीं, अपना दम तोड़ बैठीं और समाप्त हो गईं। संक्षेप में यदि कहें तो स्वातंत्र्योत्तर काल में, विशेष रूप से 1879 के बाद की शैक्षिक पत्रकारिता का जो स्तर तथा उद्देश्य था, उसने विद्वानों और शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत पत्रकारों के लिए अनुसंधान के क्षेत्र में एक विशेष छाप छोड़ी और जहां एक ओर उनका योगदान का शिक्षा के प्रसार में वस्तुपरक मूल्यांकन हुआ वहीं दूसरी ओर पत्रकारिता के क्षेत्र में नए आयाम खुले।

स्वतंत्र भारत में शैक्षिक पत्रिकाएं

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि पिछले 38 वर्षों में शिक्षा ने श्रेष्ठता के रूप में न सही सांख्यिकी के तौर पर प्रत्येक स्तर पर विकास की सीढ़ी चढ़ी है। फिर भी एक बहुत बड़ा प्रश्न है कि आज देश में इतनी संख्या में प्रस्तुत की जाने वाली ये पत्रिकाएं और उनका स्तर क्या शिक्षा के विराट् प्रसार के समकक्ष और उसके सही अनुपात में हैं तथा इस प्रकार की पत्रिकाएं किस प्रकार विशिष्ट तथा साधारण रूप में शिक्षा के सही उद्देश्य को प्रतिपादित कर रही हैं। यद्यपि शैक्षिक पत्रिकारिता के स्तर को लेकर एन० सी० ई० आर० टी० द्वारा एक वृहद् सर्वेक्षण की योजना है। यह तो द्रष्टव्य है कि शैक्षिक पत्रिकाओं का उत्पादन विभिन्न निजी, सार्वजनिक तथा शासकीय संगठनों, संस्थाओं तथा व्यक्तियों के द्वारा हो रहा है। आज अधिकतर विश्वविद्यालय, कालिज तथा शालाएं शिक्षा के विभिन्न पक्षों और आयामों को लेकर पत्रिकाओं का प्रकाशन या तो अपनी संस्था के उपयोग के लिए या अध्यापकों, अध्यापक-शिक्षकों तथा शैक्षणिक संस्थाओं के उपयोग के लिए या दोनों के लिए कर रहे हैं। उदाहरण के लिए अकेले एन० सी० ई० आर० टी० द्वारा अपना एक निजी मुख-पत्र प्रकाशित करने के अलावा शिक्षकों, तथा शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान करने वाले लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए अन्य छह पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। इसी तरह एन० आई० ई० पी० ए० द्वारा अपनी संस्था के मुख-पत्र के अतिरिक्त शिक्षा

प्रशासकों, शिक्षा अधिकारियों तथा अन्य संबंधित लोगों के लिए विभिन्न पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार; राज्य शिक्षा संस्थाएं तथा अन्य विशेष शिक्षा संस्थाएं, जैसे—केन्द्रीय विद्यालय संगठन, केन्द्रीय स्वास्थ शिक्षा ब्यूरो आदि भी इसी प्रकार की पत्रिकाओं का प्रकाशन कर रही हैं। इस तरह पिछले चार दशकों में शैक्षिक पत्रकारिता ने अनुसंधान और अन्वेषण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है।

व्यवसाय पर आधारित शैक्षिक पत्रकारिता

दूसरे तौर पर अर्थात् व्यावसायिक प्रशिक्षण के दृष्टिकोण से देखने पर हम पाते हैं कि आज तक भारत में कोई भी विश्वविद्यालय अथवा संस्था नहीं है, जो पत्रकारिता अथवा पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रम के रूप में शैक्षिक पत्रकारिता का कोई विशेष या ऐच्छिक कोर्स उपलब्ध कराता हो और इसलिए यह आसानी से समझा जा सकता है कि अधिकतर पत्रकारों ने शैक्षिक पत्रकारिता में व्यावसायिक प्रशिक्षण या तो शैक्षिक पत्रिकाओं में कार्य करते हासिल किया है या पत्रकारिता अथवा पुस्तक उत्पादन के आम पाठ्यक्रम के द्वारा या शैक्षणिक पत्रिका में कार्य करते हुए निरंतर अभ्यास द्वारा। इन दोनों दशाओं में शैक्षिक पत्रकार शैक्षिक पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्य करते हुए स्वयं को असंतुष्ट अनुभव करते हैं। वे भी जो पत्रकारिता और पत्र-व्यवहार के पाठ्यक्रम के माध्यम से प्रशिक्षित होते हैं, पत्रिकाओं के उत्पादन की कला और बारीकी से अनभिज्ञ होते हैं और इसीलिए शैक्षिक पत्रकारों के लिए एक विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है। शैक्षिक पत्रिकाओं के उत्पादन के लिए आवश्यक उन दक्षताओं, कलाओं और तरीकों की केवल पहचान ही जरूरी नहीं है बल्कि उनका बारीकी से अध्ययन भी होना चाहिए। यह पहचान त्रिकोणात्मक होना चाहिए। प्रथम यह उन शिक्षाविदों के लिए भी आवश्यक है जो शिक्षा के क्षेत्र में आवश्यक ज्ञान, दक्षता और प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं लेकिन जो किसी प्रकार के पत्रकारिता पाठ्यक्रम से अनभिज्ञ होते हैं; फिर भी वे शैक्षिक पत्रिकाओं के उत्पादन का कार्य देख रहे हैं। द्वितीय, यह उन संपादकों के लिए भी उपयोगी है जिन्होंने किसी नियमित पाठ्यक्रम के अंतर्गत पत्रकारिता में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त किया है लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में आवश्यक ज्ञान, दक्षता और प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया और जिन्हें शैक्षिक पत्रिकाओं के उत्पादन का कार्य देखना पड़ता है, और तृतीयत: शैक्षिक पत्रिकाओं में लेख लिखने वाले लेखकों के लिए आवश्यक तथा उपयोगी है। स्वाभाविक रूप से एक बड़ा कार्य भार यह है कि (क) शैक्षिक पत्रिकाओं के संपादकों के लिए पत्रकारिता के क्षेत्र में उपयोगी शैक्षिक सार-तत्व और दक्षता को विकसित करें, (ख) शैक्षिक पत्रिकाओं में कार्यरत शिक्षा-कर्मियों के लिए पत्रकारिता में आवश्यक सार-तत्व तथा दक्षता को विकसित करे तथा (ग) शैक्षिक पत्रिकाओं के लेखकों के लिए लेखन के क्षेत्र में उपयोगी तथा आवश्यक कलाविधि को विकसित करे।

शैक्षिक पत्रकारिता बनाम पत्रकारिता पाठ्यक्रम

भारत में पत्रकारिता के क्षेत्र में विधिवत शिक्षा का विकास हाल ही में हुआ है। अपवाद स्वरूप एक या दो छिटपुट और अल्पजीवी प्रयासों को छोड़ कर जब 1920 में अडियार, 1936 में अमेरिकन कालिज ऑफ एजूकेशन (बंबई) और 1938 में अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी जैसी संस्थाओं ने पत्रकारिता में सर्टिफिकेट/डिप्लोमा कोर्स प्रारंभ किए, एकमात्र कोर्स जो स्वातंत्रेतर काल में जीवित रहा वह था 1941 में पंजाब यूनिवर्सिटी द्वारा प्रारंभ पत्रकारिता में पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा कोर्स। दूसरे शब्दों में उन दिनों देश में उपलब्ध एकमात्र यही एक कोर्स था और चूंकि यह विकास की आरंभिक सीढ़ी पर था, अधिकतर पत्रकारों ने पत्रकारिता में विधिवत् शिक्षा ग्रहण करने के बजाय कार्य करते हुए ही प्रशिक्षण प्राप्त किया। निसंदेह पिछले 38 वर्षों में अनेकों विश्वविद्यालय और संस्थाओं ने पत्रकारिता और पत्र-व्यवहार (संवाद-सम्प्रेषण) के विभिन्न पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया। इनमें सर्टीफिकेट, डिप्लोमा, स्नातक, स्नाकोत्तर, एम० फिल तथा पी० एच० डी० पाठ्यक्रम शामिल हैं जिनकी सूची नीचे दी गयी है। भारतीय विद्यार्थी ही नहीं वरन् विदेशों से आए विद्यार्थियों ने भी पत्रकारिता में डिप्लोमा आदि हासिल किए। इसके अतिरिक्त अनेकों संस्थाओं में पूर्ण-कालिक, अल्प-कालिक पाठ्यक्रमों के साथ-साथ पत्राचार के माध्यम से पत्रकारिता-

शिक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था है। एक या दो विश्वविद्यालयों में कला या विज्ञान में पहली डिग्री लेने के लिए पत्रकारिता को ऐच्छिक या मुख्य प्रश्न-पत्र बनाया गया है।

पत्रकारिता से संबंधित विभिन्न पाठ्यक्रमों का प्रावधान

क्र० सं०	पाठ्यक्रम	विश्वविद्यालय/संगठन का नाम
1.	डिप्लोमा/सर्टिफिकेट (मुख्यतः एक वर्षीय)	अलीगढ़, भावनगर, कलकत्ता, दिल्ली (पुस्तक प्रकाशन, दो वर्षीय), गढ़वाल, गोहाटी, गुजरात, जबलपुर, मदुरै, मैसूर (पत्राचार द्वारा), पूना (त्रैमासिक), राजस्थान (पत्राचार), रविशंकर, सौराष्ट्र तथा भारतीय विद्या भवन, भारतीय जन संचार संगठन
2.	कला स्नातक (पत्रकारिता, तीन वर्षीय)	बंगलौर, बम्बई, कलकत्ता, मैसूर (पत्राचार पर स्नातक परीक्षा में मुख्य पत्र), दक्षिणी गुजरात, शिवाजी।
3.	स्नातक पत्रकारिता (एक वर्षीय)	उस्मानिया, कालीकट, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय मराठवाड़ा, नागपुर, रविशंकर
4.	स्नातक पत्रकारिता (दो वर्षीय)	मद्रास
5.	स्नातक संचार तथा पत्रकारिता (एक वर्षीय)	उस्मानिया
6.	स्नातक जन संचार (एक वर्षीय)	पंजाब, बंगलौर
7.	स्नातक, पत्रकारिता तथा जन संचार (एक वर्षीय)	बरहामपुर (उड़ीसा), महर्षि दयानन्द और पंजाबी
8.	स्नातक जन संचार तथा पत्रकारिता	आंध्र
9.	कला स्नातकोत्तर (पत्रकारिता)	कलकत्ता (तीन वर्षीय)
10.	कला स्नातकोत्तर (संचार)	भारतीय (एक वर्षीय), मद्रास तथा बंगलौर (दो वर्षीय)
11.	स्नातकोत्तर पत्रकारिता	बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (एक वर्षीय), केरल (दो वर्षीय)
12.	स्नातकोत्तर संचार तथा पत्रकारिता	उस्मानियां
13.	विज्ञान स्नातकोत्तर (पत्रकारिता)	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय
14.	एम० फिल०	मद्रास
15.	विद्या वाचस्पति (पी० एच० डी०) पत्रकारिता	मैसूर

इधर काफी देर के बाद विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने पत्रकारिता कोर्स के संबंध में गहराई से महसूस किया और इसलिए भारत में पत्रकारिता और संवाद-सम्प्रेषण की शिक्षा के महत्व के परीक्षण के लिए एक समिति का गठन किया, जिसने 1980-81 में अपनी रिपोर्ट पेश की है। रिपोर्ट में दी गई कुछ टिप्पणियां महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए पृष्ठ 6 और 7 में पत्रकारिता शिक्षा में दो मुख्य प्रवृत्तियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है; जिसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है—"एक ओर हाल के वर्षों में अनेकों भारतीय समाचार-पत्रों के द्वारा कार्य करते हुए ही प्रशिक्षण प्राप्त करने की कोशिश है। टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन के द्वारा 1963 में प्रारंभ प्रशिक्षण योजना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्रों में हैदराबाद से तेलुगु में निकलने वाले दैनिक पत्र 'एनाड़' ने नए प्रवेशार्थियों के लिए समय-समय पर त्रैमासिक कोर्स शुरू करके एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इस साहसिक कार्य में एक सुनियोजित तरीके से थ्योरी और प्रेक्टिकल को मिलाने का प्रयास प्रशंसनीय है। दूसरी ओर लाहौर में पंजाब यूनिवर्सिटी के डिप्लोमा कोर्स की शुरूआत के बाद पत्रकारिता कोर्स के ढांचे में असीम परिवर्तन आया है। प्रारंभिक कोर्स केवल दक्षतापूर्ण होते थे जिनमें लेखन, रिपोर्टिंग और संपादन के साथ-साथ पत्रकारिता के इतिहास और सिद्धांतों और प्रेस के नियमों पर बल दिया जाता था। छपाई और समाचार पत्र व्यवसाय-प्रबंध के बारे में बाद में सोचा गया। विकास के द्वितीय चरण में अनेकों विश्वविद्यालयों में अन्य संबंधित क्षेत्र जैसे विज्ञापन, फोटोग्राफी, जन-संपर्क, रेडियो-पत्रकारिता (यहां तक कि टी० वी० तथा फिल्म पत्रकारिता भी) जैसे विषय पाठ्यक्रम में शामिल किए गए। हाल के वर्षों में संप्रेषण-विधि एवं अनुसंधान तथा संप्रेषण के अन्य प्रायोगिक एवं व्यावहारिक क्षेत्र (जैसे ग्रामीण-संप्रेषण, विकास-संप्रेषण, जनसंख्या-संप्रेषण) अपनी ओर ध्यान आकर्षित करा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि पत्रकारिता संप्रेषण के क्षेत्र में कार्य कर रहे विभाग संचार-साधनों के साथ मिलकर कार्य करें।" स्पष्ट रूप से यह पत्रकारिता कोर्स के कार्य क्षेत्र की व्यापकता की ओर इशारा है। शैक्षिक पत्रकारिता एक दिन निश्चय ही अन्य शिक्षा कार्यक्रमों के साथ-साथ प्रत्येक संस्था का एक अभिन्न और अनिवार्य हिस्सा बन जाएगी। बहरहाल शैक्षिक पत्रकारिता का पाठ्यक्रम में कोई स्थान नहीं है; यद्यपि विभिन्न विश्वविद्यालय पाठ्यक्रमों में कृषि-पत्रकारिता, खेल-कूद पत्रकारिता, प्रसार-पत्रकारिता, यात्रा-पत्रकारिता, भाषा-पत्रकारिता आदि अन्य पक्षों का विशेष उल्लेख है।

विद्यालय/शैक्षिक पत्रकारिता में विकास पाठ्यक्रम

विशेष रूप से पिछले कुछेक वर्षों में शैक्षिक पत्रकारिता में पाठ्यक्रम तैयार करने तथा विद्यालय शिक्षा में पत्रकारिता को आरंभ करने की आवश्यकता ने बल पकड़ा है। 1980-81 में आल इंडिया फेडरेशन आफ एजूकेशनल एसोसिएशन्स के तत्त्वावधान में तथा दूसरे 1983 में एन० सी० ई० आर० टी० द्वारा आयोजित गोष्ठियों में इस बारे में कुछ रचनात्मक सुझाव सामने आए। व्यावसायिक शिक्षा की नीति व प्रक्रियाओं के अन्तर्गत भी इन पत्रकारिता पाठ्यक्रमों की आवश्यकता सहज रूप से जान पड़ती है। इसके अलावा पत्रकारिता पाठ्यक्रमों के कार्य-क्षेत्र की महत्ता और भी बढ़ जाती है क्योंकि ये पाठ्यक्रम शिक्षा को गुणात्मक रूप से ही ऊंचा नहीं उठाते हैं वरन् विद्यालयों तथा दूसरी शैक्षिक संस्थाओं द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं, मैगजीन तथा मुख-पत्रों के स्तर को ऊंचा उठाने में भी सहायक होते हैं। प्रत्यक्षतः इस गोष्ठी को विभिन्न प्रकार के नियमित तथा अल्प-कालिक पाठ्यक्रमों के बारे में विचार-विमर्श करना चाहिए ताकि विभिन्न स्तरों और वर्गों पर शिक्षा के महत्त्व को आंका जा सके।

जो लोग समाचार संवाददाता बनना चाहते हैं उन्हें शुरू से ही स्कूल के स्तर से ही तैयारी करनी चाहिए। इसलिए कार्यक्रम को गहन बनाने के लिए निम्नलिखित पाठ्यक्रमों का विकास अपेक्षित है।

(क) विद्यालय-स्तर

(1) कक्षा दस तक के विद्यार्थियों के लिए दक्षतापूर्ण कार्य-अनुभव मापदंड ताकि उन्हें शिक्षाप्रद लेखों के लिए आवश्यक सामग्री तथा सूचना जुटाने की कला, ज्ञान तथा दक्षता प्राप्त हो सके।

(2) जमा दो अवस्था तक थ्योरी के साथ-साथ दक्षतापूर्ण पाठ्यक्रमों का विकास—ताकि शैक्षिक पत्रकारिता शनैः-शनैः विकास की सीढ़ी चढ़ते हुए विद्यालय की आम धारा में समाहित हो सके।

(ख) महाविद्यालय-स्तर

(1) कला/विज्ञान/वाणिज्य की पहली डिग्री के लिए थ्योरी के साथ-साथ दक्षता पूर्ण पाठ्यक्रम।

(2) स्नातक तथा स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के अंतर्गत शैक्षिक पत्रकारिता के लिए ऐच्छिक तथा मुख्य प्रश्न-पत्र।

(3) शैक्षिक पत्रकारिता स्नातकोत्तर डिप्लोमा कोर्स के रूप में।

(ग) शिक्षक प्रशिक्षण-स्तर

(1) प्राथमिक शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण के रूप में शैक्षिक पत्रकारिता में मुख्य ऐच्छिक प्रश्न-पत्र।

(2) बी० टी०/बी० एड०/एल० टी० पाठ्यक्रमों में शैक्षिक पत्रकारिता मुख्य ऐच्छिक प्रश्न-पत्र के रूप में।

(3) एम० एड०/एम० फिल०/एम० ए० (शिक्षा) के पाठ्यक्रमों में शैक्षिक पत्रकारिता मुख्य ऐच्छिक प्रश्न-पत्र के रूप में।

(घ) सेवा-कालीन पाठ्यक्रम

(1) शिक्षकों तथा शिक्षा के संबंध में लिखने वाले लेखकों के लिए शैक्षिक पत्रकारिता में अल्प-कालिक सेवा-कालीन पाठ्यक्रम।

(2) शैक्षणिक लेखकों तथा अध्यापक-शिक्षकों के लिए शैक्षिक पत्रकारिता में अल्प-कालिक सेवा-कालीन पाठ्यक्रम।

(3) शैक्षिक पत्रिकाओं में कार्यरत व्यक्तियों के लिए शैक्षिक पत्रकारिता में अल्प-कालिक सेवा-कालीन पाठ्यक्रम।

(ङ) उन्नत-स्तर

(1) शैक्षिक पत्रकारिता में साझे पाठ्यक्रम (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् एस० ई०/एन० आई० ई० पी० ए०/आई० आई० एम० सी० इत्यादि)

(2) शैक्षिक पत्रकारिता में विशिष्ठ विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम।

इसके अतिरिक्त शिक्षा संबंधी लेखकों तथा पत्रकारों की सर्वांगीणता के लिए बहु-आयामी उन्नत कार्यक्रमों का विकास किया जाना चाहिए। अब वह समय नहीं है कि एक व्यक्ति शिक्षा में एक सामान्य डिग्री हासिल करने से अथवा इस व्यवसाय की कुछ युक्तिपूर्ण बातों को जान लेने से ही अपने कार्य में सफल हो सके। वास्तव में अब वह समय है जहां एक लंबे समय तक अपने गहन ज्ञान एवं दक्षता का निर्माण करना होता है तथा उसे समय-समय पर समृद्ध एवं उन्नत कार्यक्रमों के द्वारा लगातार पोषित करना होता है, उसे प्राणवान बनाए रखना होता है। इसीलिए शैक्षिक पत्रकारिता में विशेषज्ञता का होना अत्यंत अनिवार्य है।

शैक्षिक पत्रकारिता का पुनः प्रवर्तन

सुस्पष्ट है कि एक लंबे समय तक शैक्षिक पत्रकारिता की ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया। पत्रकारिता में शिक्षा की महत्ता पर हाल तक भी विचार नहीं किया गया। यही कारण है कि शिक्षा को न तो समाचार-पत्रों में और न ही अन्य जन-संपर्क के साधनों में उचित स्थान मिला। बहरहाल, स्थिति में धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। अब अधिकतर पत्र शिक्षा संबंधी समाचारों को यथोचित स्थान दे रहे हैं और इस कार्य के लिए अपने पत्रों में विशेष शिक्षा-संवाददाताओं की नियुक्ति कर रहे हैं। यहां तक कि जो जानी-मानी पत्रिकाएं हैं वे प्रायः न केवल शैक्षिक अभिरुचि के लेखों को अपितु शिक्षा नीति तथा प्रक्रियाओं से संबंधित लेखों को भी प्रकाशित कर रही हैं। शिक्षा अब इलेक्ट्रोनिक तथा कंप्यूटर पत्रकारिता में ही नहीं रेडियो तथा टी० वी० माध्यमों में भी प्राथमिकता प्राप्त कर रही

है। इस प्रकार पिछले कुछ वर्षों से शैक्षिक पत्रकारिता की बाढ़ ने शैक्षिक पत्रकारिता में एक युगांतकारी परिवर्तन ला दिया है और यह जन-संपर्क साधनों के साथ एक मजबूत एवं गहन तादात्म्य स्थापित करते हुए शिक्षा में गुणात्मक प्रगति लाने में एक शक्तिशाली साधन के रूप में उभर कर सामने आई है। साथ ही दूसरी ओर विद्यालयों में जो पत्रकारिता का चलन बढ़ा है उससे विभिन्न व्यक्ति समुदाय और संस्थाएं परस्पर लाभ उठा रही हैं और इस तरह शैक्षिक पत्रकारिता के उद्देश्य को एक ठोस एवं वास्तविक धरातल मिला है। इसी विराट् परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर इस गोष्ठी में उन लोगों को शामिल किया गया है जो न केवल संचार-साधनों के क्षेत्र में कार्यरत विशेषज्ञ हैं बल्कि वे लोग भी हैं जो शिक्षा एवं पत्रकारिता में कार्य कर रहे शिक्षक तथा लेखक हैं।

दृढ़ विश्वास न सही एक अपेक्षित चाह है हमारी कि इस गोष्ठी में जो भी विचार-विनिमय किया गया उससे शैक्षिक पत्रकारिता में हमारी समस्याओं, प्राथमिकताओं, संभावनाओं तथा क्षमताओं का ही समाधान नहीं होगा बल्कि शैक्षिक पत्रकारिता में पुनः परिवर्तन लाने और इसे जीवंत बनाने में भी मदद मिलेगी।

□□

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि पिछले 38 वर्षों में शिक्षा ने श्रेष्ठता के रूप में न सही सांख्यिकी के तौर पर प्रत्येक स्तर पर विकास की सीढ़ी चढ़ी है। फिर भी एक बहुत बड़ा प्रश्न है कि आज देश में इतनी संख्या में प्रस्तुत की जाने वाली ये पत्रिकाएं और उनका स्तर क्या शिक्षा के विराट प्रसार के समकक्ष और उसके सही अनुपात में है तथा इस प्रकार की पत्रिकाएं किस प्रकार विशिष्ट तथा साधारण रूप में शिक्षा के सही उद्देश्य को प्रतिपादित कर रही है।

शैक्षणिक पत्रकारिता की अवधारणा

□ डा० भंवर सुराणा

मेरी समझ के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है मानव के जीवन में प्रकाश की किरण का प्रवेश करना जिससे उसकी चेतना का उर्ध्वारोहण हो सके और वह अपने अन्तर और बाहर के परिवेशगत स्थितियों, समस्याओं अथवा कठिनाइयों में स्वविवेक से निर्णय कर सके। उसके जीवन की यही प्रकाश किरण उसके व्यक्तिगत जीवन, सामाजिक जीवन और आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सोच और निर्णय को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। शिक्षा उसको इन सारी परिस्थितियों का आंकलन करने में सहायता करती है, उसके साहित्यिक-सांस्कृतिक स्तर को उन्नत करती है।

मुझे बहुत प्रसन्नता है कि अन्ततोगत्वा एक लम्बे समय के बाद इस कार्यशाला में शैक्षणिक पत्रकारिता को परिभाषित करने का प्रयत्न किया गया है।

मैं शिक्षा और पत्रकारिता को जीवन के विशाल क्षेत्र में दो ऐसे पूरक मानता हूं जो एक ही लक्ष्य को लेकर चलते हैं। मनुष्य के जीवन को उन्नततम अवसर प्रदान करना शिक्षा का उद्देश्य है, और पत्रकारिता का उद्देश्य है जनमानस में चेतना का जागरण करना। मानव जीवन की उत्कृष्टता के लिए इन दोनों को साधन माना जा सकता है, वे साध्य नहीं हैं। शिक्षा और पत्रकारिता दोनों की अपनी-अपनी संस्थागत विवशताएं हैं और यह भी संभव है कि उन संस्थागत विवशताओं पर चोट किए बिना दोनों क्षेत्रों में काम करने वाले लोगों की कूपमंडूकता, परस्पर एक दूसरे को नकारने की प्रवृत्ति, परस्पर समादर न करने की एक अवचेतन मानसिकता नहीं टूट सकती। जब तक ये विवशताएं बनी रहेंगी तब तक हम किसी एक निर्धारित घेरे में ही डोर से बँध कर घूमते रहेंगे और न स्वयं कुछ नया सीख पाएंगे न कुछ नया सोच दे पाएंगे।

शिक्षा का उद्देश्य

मेरी समझ के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है "मानव के जीवन में प्रकाश की किरण का प्रवेश करना जिससे उसकी चेतना का उर्ध्वारोहण हो सके और वह अपने अन्तर और बाहर के परिवेशगत स्थितियों, समस्याओं अथवा कठिनाइयों में स्वविवेक से निर्णय कर सके। उसके जीवन की यही प्रकाश-किरण उसके व्यक्तिगत जीवन, सामाजिक जीवन और आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सोच और निर्णय को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। शिक्षा उसको इन सारी परिस्थितियों का आंकलन करने में सहायता करती है; उसके साहित्यिक-सांस्कृतिक स्तर को उन्नत करती है।" यही नहीं, शिक्षा जीवन के प्रति एक ललक पैदा करती है, जिससे मानव को दिशा

बोध मिलता है, सौन्दर्य-बोध मिलता है और मिलता है देवऋण, मातृऋण व पितृऋण से उऋण होने का संकल्प। शिक्षा से ही वह ज्ञान प्राप्त करता है और विज्ञान के द्वारा प्रकृति की परमकृपा का अवगाहन करता है । शिक्षा को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के चतुर्धर्मों का आधार माना गया है और उसके स्वरूप से ही व्यक्तित्व के विकास या विनाश का सिलसिला आरम्भ होता है।

शिक्षा की शिक्षाविदों ने कई परिभाषाएं की हैं जो अपने-अपने संदर्भ में उचित प्रतीत होती हैं, पर मेरी समझ से शिक्षा का मूल उद्देश्य शिक्षक और शिक्षार्थियों में संवाद की स्थिति—सतत एवं निरंतर चलने वाला संवाद, जो जिज्ञासा की पूर्ति करे तथा सत्यम्, शिवम्, और सुन्दरम् की ओर शिक्षार्थी को उन्मुख करे। मानव मूल्यों की रक्षा तथा उनकी श्रीवृद्धि में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों का योगदान महत्वपूर्ण है। शिक्षार्थी तथा शिक्षक दोनों में जिज्ञासा का जिस दिन अभाव अंकुरित हो उठेगा उसी दिन से शिक्षा, शिक्षक और शिक्षार्थी की विद्यमानता पर प्रश्नचिह्न उभर कर सामने खड़ा होगा । तीन आर—रीडिंग, राइटिंग और अर्थमेटिक शिक्षा की चरम परिणिति नहीं है। वह सीढ़ी का पहला पग मात्र है। इसी संदर्भ में शैक्षणिक पत्रकारिता की भूमिका सामने आती है।

शैक्षणिक पत्रकारिता के तीन आयाम हैं। सीधी सादी पत्रकारिता की भाषा में कहा जाए तो यहां भी एक प्रेषक है, प्रेषणीय विचार है और विचारों को ग्रहण करनेवाला कोई ग्राहक समूह है।

शैक्षिणक पत्रकारिता

पत्रकारिता के क्षेत्र में एक अदना सा व्यक्ति होने के नाते शैक्षणिक पत्रकारिता को मैंने भी समीप से देखने का प्रयास किया है। शैक्षणिक पत्रकारिता के क्षेत्र में जिस प्रकार की पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं, उनकी अपनी सीमाएं हैं। उनके पाठकों की सीमाएं है, उनके प्रचार-प्रसार की सीमाएं हैं, सामग्री संचयन की सीमाएं हैं, अर्थ की सीमाएं हैं, व्यवस्था की सीमाएं हैं। उनमें सामग्री के प्रकाशन पर उच्चस्थ पदासीन लोगों की मानसिकता की समस्या भी है।

दो दिन पूर्व इस कार्यशाला में राजस्थान शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित दो पत्रिकाओं— शिविरा तथा नया शिक्षक की प्रशंसा की गई। मुझे गौरव है कि ये दोनों इस प्रान्त से प्रकाशित होती हैं पर उनकी सामग्री की समीक्षा किया जाना भी मुझे समीचीन प्रतीत होता है। शिविरा में से शिक्षा विभाग के विभागीय परिपत्रों, समारोहों की सूचनाओं और सामयिक चित्रों के पृष्ठों को यदि आप अलग कर दें तो क्या वह कलेवर का एक चौथाई भी बना रख पाएगी जिसमें सामान्य शिक्षक को उसके कार्य में नवोन्मेष अपनाने में दिशा निर्देश मिल सकेगा ? नया शिक्षक, शिक्षा जगत का अपना अनूठा पत्र है। उसमें अंग्रेजी तथा हिन्दी, दोनों भाषाओं के माध्यम से शिक्षा के संबंध में सामग्री और सार संक्षेप प्रस्तुत किये जाते हैं । उसके कुछ अंकों को मैंने देखा है। उनमें भारतेतर विद्वानों का इतना वर्चस्व स्थापित दिखाई पड़ता है कि यदि मेरे अग्रज श्री नन्द चतुर्वेदी के शब्दों में कहूं, तो यह कि भारत की धरती से अलग पाश्चात्य परम्पराओं और वहां के परिवेश से ओत-प्रोत वहां के अनुभवों से हम कितना सीख सकेंगे यह कहना कठिन है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में शिक्षा जगत में इतने प्रयोग हो रहे हैं, उनका मूल्यांकन करने, उनके अनुभवों का परस्पर आदान-प्रदान करने और उन प्रयोगों को विस्तार देने की दिशा में "जनशिक्षण", "लोकशिक्षिका" "बालहित" जैसी पत्रिकाओं की आवश्यकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

नीरस सामग्री

शैक्षणिक पत्रकारिता में लगे लोगों के सामने सबसे बड़ी समस्या है सामग्री में नीरसता की। शिक्षा जगत में मेरी अल्पसमझ से अधिकांशत: वही लोग आकृष्ट होते हैं जिनके मन में राष्ट्र के प्रति, समाज के प्रति कुछ करने की भावना होती है। मैं उन लोगों की बात नहीं करता जो केवल पेट भरने के लिए ही विवश होकर नौकरी करने इस ओर आते हैं और जिनकी संख्या मेरी गणना में बहुत अधिक नहीं होती। जब कुछ कर गुजरने की तमन्ना लिये हुए लोग शिक्षा जगत में आते हैं तो वे कुछ करते भी हैं। क्या हमारी शैक्षणिक पत्रिकाओं में ऐसे लोगों के अनुभवों को उनकी अपनी भाषा में, सहज सरल भाषा में प्रकाशित नहीं किया जा सकता। ऐसा करने से उनकी पठनीयता बढ़ेगी।

इन पत्रिकाओं की सामग्री चयन में साधारणत: अधिक विकल्प नहीं होता। विशेषज्ञों के लिए पत्रिकाओं में निःसंदेह सामग्री विशेषज्ञों के स्तर के अनुरूप ही होगी और होनी भी चाहिए पर क्या उस सामग्री को अन्य पत्र-पत्रिकाओं में आदान-प्रदान से वंचित रखा जाना चाहिए ?

मेरे मित्र, आशीष सिन्हा ने समाचारपत्र जगत में बड़े औद्योगिक घराने के अधिपत्य की चर्चा की है। शैक्षणिक तथा विज्ञान और अनुसंधान पत्रिकाओं में भी अधिकांश में क्या वह स्थिति नहीं है? हमारे देश की प्रसिद्ध वैज्ञानिक संस्थाओं और प्रयोगशालाओं में क्यों कनिष्ठ वैज्ञानिकों के कार्यों का श्रेय बड़े लोग नहीं ले जाते हैं ? क्यों बड़े-बड़े आचार्य अपने समूह के लोगों के अतिरिक्त, अन्य लोगों के कार्यों का उल्लेख तक नहीं करते ? इस स्थिति को सहज करने में हमारी शैक्षणिक पत्रिकाएं बड़ा योग दे सकती हैं। शिक्षाविदों, वैज्ञानिकों तथा विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त करने वालों से अपने पाठकों का परिचय कराने में भी वे सहायक हो सकती हैं इसमें कोई बाधा नहीं है; सिवाय मानसिकता की बाधा के, अनिश्चय की बाधा के। इन प्रश्नों का हल करने में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्; विश्व-विद्यालय अनुदान आयोग; तथा विभिन्न विश्वविद्यालय मिलकर एक सामग्री बैंक स्थापित कर सकते हैं जहां से विभिन्न शैक्षणिक पत्रिकाएं उसे कम समय में प्राप्त कर सकें। लेखकों के मानदेय के प्रश्न पर भी इन पत्रिकाओं के सम्पादकों, प्रकाशकों को उदारता से सोचना होगा क्योंकि परिश्रम की सार्थकता में उसका अपना अलग स्थान है, आनन्द है।

शाश्वत शिक़ायत

दैनिक तथा साप्ताहिक समाचार पत्रों में शिक्षा जगत से संबंधित सामग्री तथा समाचारों को कम स्थान मिलने की एक शाश्वत शिक़ायत रहती है। उसके तीन कारण प्रतीत होते हैं। पहला कारण है, पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत लोगों के पास समय की कमी। दूसरा कारण है उचित सामग्री का अभाव और तीसरा कारण है, शिक्षा जगत के महारथियों का अपने आप को सामान्य जनता से अलग समझना, असंबद्ध समझना। पत्रकारिता की विभिन्न परिभाषाओं में एक परिभाषा है कि "पत्रकारिता शीघ्रता में लिखा जा रहा इतिहास है।" पत्रकार का रक्तचाप घड़ी की टिक-टिक के साथ संस्करण छापने के समय तक तेजी से बढ़ता है इसको केवल भुक्तभोगी ही जान सकते हैं। कक्षा अथवा प्रयोगशाला में या कार्यशाला में विषय विवेचना करने वाले विद्वान् उसके कार्य में जितनी शीघ्रता अपेक्षित है उसका अनुमान नहीं लगा सकते। पत्रकारों से शिक्षाजगत के लोगों का जीवन्त सम्पर्क नहीं रह पाता उसका कारण पत्रकार का विविधतापूर्ण जीवन है। उसे संगीत गोष्ठी के समाचार देने हैं और शपथ ग्रहण के भी। वही कवि सम्मेलन में कवितापाठ के समाचार लिखता है और परमाणु संबंधी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के भी। समय, स्थान, विषय और व्यक्ति की समाजगत प्रासंगिकता का भी समाचारों में अपना महत्व होता है। जिस दिन विधान-सभा दल के नेता का चुनाव हो, उसी दिन आप कोई उच्च-स्तरीय शैक्षणिक सम्मेलन करें तो यह स्वाभाविक है कि उसका समाचार किसी ऐसे पृष्ठ पर छपेगा, जो पत्रकार की अपनी दृष्टि में भी महत्वपूर्ण नहीं हो; क्योंकि जनता के जीवन पर उस चुनाव का आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक हलकों के दूरगामी प्रभाव पड़ने वाला है।

जिस प्रकार शिक्षक को अपने पद एवं व्यवसाय का अहं होता है उसी प्रकार पत्रकार को भी अपने पद एवं व्यवसाय का अहं होता है। चाहे वह पूंजीवादी देशों के समाचारपत्रों, संचार माध्यमों में कार्यरत पत्रकार हो, चाहे वह समाजवादी देशों का पत्रकार हो, चाहे निर्गुट देशों का पत्रकार हो। मेरे अग्रज अक्षय कुमार जैन के अनुसार उन सबमें अपने व्यवसाय का अहं समान रूप से होता है। यदि शिक्षाजगत तथा समाचार जगत में जीवंत सम्पर्क हो तो सामग्री और समाचारों के प्रकाशन की समस्या काफी हल हो सकती है। इस दिशा में मेरा एक सुझाव भी है कि शिक्षा जगत में कार्यरत शिक्षक, लेखक तथा विशेषज्ञ कभी एक पूरा दिन किसी दैनिक समाचारपत्र के कार्यालय में बितायें और वहां का कार्य कैसे होता है, यह बारीकी से देखें। इससे भी एक दूसरे की कठिनाई समझने में काफी सहायता मिलेगी।

शिक्षा और पत्रकारिता का चोली-दामन का साथ है और उनकी समस्याएं हरिकथा की तरह अनंत हैं। मैं अपनी

ओर से कुछ सुझाव आपके विचारार्थ प्रस्तुत करना चाहता हूँ। वे यह कि :

(1) ऐसे सम्मेलन में शैक्षणिक पत्रकारिता में लगे लोगों के साथ ही साथ ऐसे जनसंचार माध्यमों से जुड़े लोगों को बुलाया जाना चाहिए जो निर्णायक भूमिका अदा कर सकें।

(2) एक ऐसे केन्द्र की स्थापना की जाए जो विभिन्न शैक्षणिक पत्रिकाओं में सामग्री को दुहराये जाने से बचाये तथा जहां उनका संग्रह हो।

(3) एक ऐसे केन्द्र की स्थापना की जाए जिसमें मुद्रण तथा जनसंचार के अन्य माध्यमों में आ रही नवीनतम तकनीक का ज्ञान उपलब्ध हो। केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा विभिन्न विश्वविद्यालय मिलकर जिनकी इस विद्या में रुचि हो, उनके लिये क्षेत्रीय उपकेन्द्रों के माध्यम से पाठ्यक्रम आयोजित करें।

(4) विभिन्न भाषायी पत्रिकाओं में सामग्री के आदान-प्रदान के लिये अनुवाद केन्द्र की स्थापना हो।

(5) विभिन्न शिक्षण संस्थाओं, अध्ययन केन्द्रों, शोध संस्थानों, प्रयोगशालाओं, आदर्श विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की गतिविधियों से समाचार पत्रों को अवगत कराने के लिए जनसम्पर्क प्रकोष्ठों का निर्माण किया जाए तथा उनकी निष्क्रियता का आवरण समाप्त किया जाए।

अंत में मैं आयोजकों को साधुवाद देता हूँ, कि उन्होंने विधानसभा चुनाव के अवसर पर, जब सब पत्रकार व्यस्त हैं यह सार्थक गोष्ठी आयोजित की।

□□

शैक्षणिक पत्रकारिता में लगे लोगों के सामने सबसे बड़ी समस्या है सामग्री की नीरसता की। शिक्षा जगत में मेरी अल्पसमझ से अधिकांशतः वही लोग आकृष्ट होते हैं जिनके मन में राष्ट्र के प्रति, समाज के प्रति कुछ करने की भावना होती है। क्या हमारी शैक्षणिक पत्रिकाओं में ऐसे लोगों के अनुभवों को उनकी अपनी भाषा में, सहज सरल भाषा में प्रकाशित नहीं किया जा सकता। ऐसा करने से उनकी पठनीयता बढ़ेगी।

पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा विषयक समाचार

□ राजेन्द्र शंकर भट्ट

समाचारपत्रों में सामान्यतः क्या प्रकाशित होता है और क्या प्रकाशित नहीं होता इस पर शिक्षण संस्थाओं में अलग-अलग और सामूहिक रूप से समय-समय पर विचार होना चाहिए। जैसा कहा गया, इसके लिए विशेष विभाग और समुचित योग्यता तथा अनुभव के व्यक्ति हों तो अधिक उपयोगी होता है परन्तु जिनके हाथों में संस्था-संचालन का भार है, वे भी थोड़े चिंतन और अभ्यास से बहुत अधिक परिणाम प्राप्त कर सकते हैं।

पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा विषयक समाचार पर्याप्त प्रकाशित होते हैं या नहीं, इसका निर्णय कई दृष्टियों से करना होगा।

शिक्षा विषयक जो समाचार प्रकाशित होते हैं, उनको तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है :

(1) अनुकूल समाचार,
(2) प्रतिकूल समाचार और
(3) जनहित के समाचार।

अनुकूल समाचारों में विशेषतः होते हैं परीक्षा परिणामों में उत्कृष्टता, विद्यार्थियों तथा अध्यापकों की विशिष्ट सफलता, पाठ्यक्रमों तथा शिक्षा-सुविधाओं का विस्तार, भवनों का निर्माण, अध्यापकों तथा विद्यार्थियों की विदेश यात्राएं, विभिन्न प्रकार के समारोह और आयोजन, तथा शिक्षा संस्थाओं द्वारा जनसेवा।

प्रतिकूल समाचारों में से कुछ घटना प्रधान होते हैं, जैसे बनते हुए या बने हुए भवनों की क्षति, विशेषतः तब जब उसके कारण कुछ विद्यार्थियों की मृत्यु हो जाए। प्रबन्ध कार्य में गड़बड़ी अगर गंभीर हो तो उसे भी स्थान मिल जाता है। विद्यार्थियों अथवा अध्यापकों को किसी भी तरह पीड़ित, शोषित अथवा बाधित किया जाता हो, तो समाचार-पत्र उसकी ओर भी ध्यान देते हैं। चारित्रिक वैषम्य के समाचार भी प्रकाशित होते हैं। आंदोलन जो विद्यार्थी अथवा अध्यापक करते हैं, उन्हें समाचारपत्र स्थान देते हैं। अध्यापक अथवा प्रबन्धक यदि विद्यार्थी विरोधी अथवा अभिभावकों के हित के विरुद्ध कुछ करते हैं, तो समाचार-पत्र खबर लेने से नहीं चूकते। मारपीट का मौका आता है, तो समाचार अपने आप बन जाता है। जो अनहोना है, वह सामान्यतः तभी समाचार बनता है जब वह प्रतिकूल पड़ता है। लेकिन अनुकूल होने पर भी अनहोनी बातों को स्थान कम नहीं मिलता।

जनहित के समाचार सामान्यतः शिक्षण संस्थाओं में स्थानाभाव, विद्यार्थियों को प्रवेश दिलाने में दिक्कतें और धांधली प्रवेश के लिए धन-वसूली भी आती है, जो कार्य

शिक्षण संस्थाओं का नहीं है उसमें विद्यार्थियों और अध्यापकों का सहयोग और उनकी सफलता, तथा अध्यापक-अभिभावक सम्पर्क से संबंधित होते हैं। जनहित का कोई पक्ष हो, समाचार पत्र उसकी ओर ध्यान देने में नहीं चूक सकते।

प्रश्न दो बनते हैं :

(1) जो सामान्यत: प्रकाशित होता है, उसे कैसे बढ़ाया और सुधारा जाए, तथा

(2) जो सामान्यत: प्रकाशित नहीं होता, वह क्या है और उनके प्रकाशन के लिए क्या प्रबन्ध किया जा सकता है।

तीन श्रेणियों में सामान्यत: प्रकाशित होने वाली जिस सामग्री का विवरण ऊपर दिया गया है, उसे पर्याप्त, नियमित तथा परिणाम-प्रेरक नहीं माना जा सकता।

अनुकूल समाचार

नीरी सराहना में जो समाचार प्रकाशित होते हैं, उनको स्थान चाहे जितना मिले, जिनकी सराहना होती है, वे सदा उसे अपर्याप्त मानते हैं। फिर भी, समय पर, सुरुचि एवं कुशलता तथा संयम से लिखे, अनुकूल समाचार यदि पत्र-पत्रिकाओं को और अधिक मिलने लगें तो उनको अवश्य और अधिक स्थान मिल सकता है। ऐसे समाचार क्या हो सकते हैं, कैसे उन्हें लिखा और तैयार करना चाहिये, और कैसे पत्रों-पत्रकारों तक पहुंचाना चाहिये, यह अब विशिष्ट व्यवसाय बन गया है। जो अनुकूल समाचार हैं, उन्हें अपने आप प्राप्त करने का प्रयत्न समाचारपत्र कम करते हैं : ऐसे समाचार स्वयं अपनी प्राथमिकता कम बना पाते हैं। पाठकों की रुचि, उत्सुकता, हितसाधना की परिधि में जो आते हैं, उनके लिए तो प्रयत्न पत्र और पत्रकार फिर भी कर लेते हैं। जिन समाचारों को शिक्षण संस्थाएं, प्रबंधक, अध्यापक तथा विद्यार्थी अपनी दृष्टि से आवश्यक अथवा प्रशंसनीय मानें, उनके प्रकाशन के लिए तो उन्हें विशेष प्रयत्न करना ही होगा। अनुकूल समाचारों में जिनको गिनाया गया, उनमें ज्यादातर ऐसे होते हैं जिनकी जानकारी अपने आप समाचारपत्रों तक पहुंच भी नहीं पाती। समय पर और समुचित रूप से, उसे पहुंचाकर ही उसके प्रकाशन के लिए अधिक ध्यान और स्थान प्राप्त किया जा सकता है। यह कैसे किया जाए, इसका ज्ञान और अभ्यास बढ़ाया जाना चाहिए, अथवा प्रशिक्षित एवं अनुभवी व्यक्तियों की सहायता ली जानी चाहिये। जो संस्थाएं बड़ी हैं, वे पृथक कार्यकर्ता, पूर्णकालीन अथवा अल्पकालीन, रख सकती हैं—कुछ संस्थाओं के समूह मिलकर भी ऐसी सेवाएं प्राप्त कर सकती हैं। प्राय: प्रत्येक जिले में राजकीय जनसंपर्क अधिकारी नियुक्त हैं। जिला शिक्षा अधिकारी यदि पहल करें, तो उनके माध्यम से अच्छा प्रचार-कार्य हो सकता है। अनुकूल समाचार, यह दुर्भाग्य है, पत्र-पत्रकारों द्वारा सामान्यत: प्रचार-प्रयत्न ही माने जाते हैं।

प्रतिकूल समाचार

प्रतिकूल समाचार और जनहित के समाचार जो सामान्यत: अपने आप प्रकाशित होते हैं, उनके द्वारा भी क्रमश: अहित कम करने और हित बढ़ाने के लिए, विशेष प्रयत्न आवश्यक होता है। कुछ सहानुभूति इसी से जागृत हो जाती है जब संबंधित संस्थाएं अथवा व्यवस्थापक स्वयं ऐसे समाचार देते हैं। उनके ऐसा करने का परोक्ष लाभ यह और होता है कि प्रतिकूल से प्रतिकूल समाचार का अनुकूल अंश भी स्थान प्राप्त कर लेता है। जो प्रयत्न प्रतिकूलता को कम करने का किया जाता है, उसे भी स्थान मिल जाता है। तीसरे, जो प्रयत्न ऐसी परिस्थिति फिर से न होने देने के लिए किया जाता है या करने के लिए सोचा जाता है, वह भी सामने आ जाता है। समाचार प्रतिकूल है, इसलिए उसे दबाना सही नहीं होता। जो कुछ अपने आप अंतत. पत्रों-पत्रकारों तक पहुँचने वाला है, उसकी प्रेषण एवं प्रकाशन प्रक्रिया में, जहां तक हो सके, सहायक होना ही लाभकारी होता है।

इस विषय में, शिक्षण संस्था बड़ी हो या छोटी, सामान्यत: प्रयत्न समाचारों को छिपाने या दबाने का ही किया जाता है। मानव स्वभाव के यही अनुकूल पड़ता है। अपनी कमी, कमजोरी, गलती कौन अपने आप उजागर

करना चाहता है। परन्तु पत्र-पत्रकारों के स्वभाव तथा दायित्व की दृष्टि से देखें तो लगेगा कि ऐसे समाचार छिपाने या दबाने की कोशिश कामयाब भी कम होती है, और ज्यादातर उल्टी ही पड़ती है। बड़ा मुश्किल होगा इस विषय में बने-बनाये दृष्टिकोण को बदलना, लेकिन जो कम हानिकारी है, उसी मार्ग को चुनना चैतन्यता और बुद्धिमानी माना जायेगा।

जनहित समाचार

जनहित के जो समाचार प्रतिकूल पड़ते हैं, उनको लेकर तो कहा यह जाना चाहिए कि शिक्षा संस्थाओं का स्वत: दायित्व होता है जनसाधारण को वास्तविकताओं से सूचित करना और सूचित रखना। यह भ्रम यदि है तो छोड़ दिया जाना चाहिये कि शिक्षण संस्था गैर-सरकारी हो जाने से निजी संपत्ति हो जाती है। भावी पीढ़ियों का शिक्षण तथा निर्माण जिन संस्थाओं के हाथों में है, उनकी प्रत्येक प्रक्रिया और गतिविधि जनरुचि का विषय है, और ऐसी संस्था कुछ भी प्रकट करने से इन्कार नहीं कर सकती। यहां भी वही बात है। जो अच्छा है, उसके प्रकाशन के लिए भी विशेष प्रयत्न करना होगा, और जो प्रतिकूल पड़ता है, उसकी पीड़ा को चतुरता से समाचार देकर कम किया जा सकता है।

समाचारपत्रों में सामान्यत: क्या प्रकाशित होता है, और क्या प्रकाशित नहीं होता, इस पर शिक्षण संस्थाओं में अलग-अलग, और सामूहिक रूप से, समय समय पर, विचार होना चाहिये। जैसा कहा गया, इसके लिए विशेष विभाग और समुचित योग्यता तथा अनुभव के व्यक्ति हों तो अधिक उपयोगी होता है, परन्तु जिनके हाथों में संस्था-संचालन का भार है, वे भी थोड़े चिन्तन और अभ्यास से बहुत अधिक परिणाम प्राप्त कर सकते हैं।

जन सम्पर्क

यहां हम पहुंचते हैं, जनसंपर्क की आवश्यकता और महत्व पर। शिक्षण संस्थाएं जनसंपर्क का समुचित प्रबन्ध करके, अपनी बहुत अधिक सेवा और हित-साधन कर सकती हैं। जन संपर्क मात्र समाचार-प्रेषण नहीं है, इसका अंत संवाददाता सम्मेलनों में भी नहीं होता। जन संपर्क का मुख्य लक्ष्य होता है ऐसा सुविधाजनक वातावरण बनाना कि अनुकूल समाचार अपने आप अधिक प्रकाशित होते रहें, और अपने आप पत्र-पत्रकार प्रतिकूल समाचारों के प्रकाशन में संयम तथा सहानुभूति दिखाते रहें। शिक्षण संस्थाओं और अध्यापकों का सम्मान, समाज के अन्य वर्गों की तरह, पत्र और पत्रकार भी करते हैं। अतएव शिक्षण संस्थाओं की ओर से सम्पर्क की पहल की जाए तो प्रतिक्रिया रचनात्मक और अनुकूल ही होगी। क्षेत्र के जो पत्र और पत्रकार प्रमुख एवं प्रभावशाली हैं, उन्हें निर्धारित अवधि के अन्तराल से निरन्तर चर्चा के लिए संस्थाओं में बुलाया जाना चाहिये—यह समारोहों में पत्रकारों के आगमन से अतिरिक्त बात है। बिना स्पष्ट और तात्कालिक लक्ष्य के जब संपादकों तथा संवाददाताओं से संपर्क किया जाता है, तब उन्हें अपने महत्व का आभास होता है, और जो उन्हें महत्व देता है, उसके प्रति वे अपने आप अधिक अनुरक्त हो जाते हैं।

अब हमें ऐसे विषयों को, ऐसी सामग्री को लेना होगा, जो सामान्यत: समाचार-पत्रों में प्रकाशित नहीं होती। समस्या उसे समझने और उसका प्रकाशन प्रोत्साहित करने की है।

नव निर्माण

पत्र-पत्रिकाएं-पत्रकार जिस दृष्टिकोण से भारत में काम कर रहे हैं, उसके कारण जो अधिक प्रकाशनीय है, उसको कम ध्यान और स्थान प्राप्त हो रहा है। देश की स्वतन्त्रता के बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण है देश का नव-निर्माण। इस प्रयत्न में आते हैं विभिन्न विकास-कार्य, जिनको पंचवर्षीय योजनाओं तथा वार्षिक आय-व्ययकों में समाविष्ट किया जाता है। इस प्रकार जो राष्ट्रीय व्यय होता है, उसके अनुपात का प्रतिबिम्बन समाचार-पत्रों में नहीं हो रहा। आखिर, जो व्यय होता है, उसे जनसाधारण से संकलित किया जाता है। जनतंत्र है, जो कर्जा या दान विदेशों से लिया जाता है, उसका भार भी भारत के निवासियों को उठाना पड़ता है। उन्हें यह बताने का प्राथमिक दायित्व, तथा समुचित आवश्यकता बनती है कि क्या धन

संकलित होता है, और किस प्रकार वह व्यय होता है : जो लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं, उनकी प्राप्ति कितनी, किस प्रकार होती है। यह रचनात्मकता समाचारों के संकलन तथा संपादन एवं प्रस्तुतीकरण में प्रविष्ट ही नहीं हो पायी है।

यह निरे प्रचार की बात नहीं है। निर्माण कार्यों में व्याघात, अवधि-हनन, पक्षपात, भ्रष्टाचार और अमानवीय दुष्कृत्य भी समाचार हो सकते हैं। कहना यह है कि समाचार पत्र उनकी ओर भी उस अनुपात में ध्यान नहीं देते, जिस अनुपात में उनके लिए व्यय निर्धारित होता है।

इस तरह, राष्ट्र-निर्माण के अनुकूल और प्रतिकूल दोनों पक्ष, महत्व के समाचार होते हुए भी, समाचार पत्रों में समुचित स्थान प्राप्त नहीं कर पाते। शिक्षा विषयक समाचार भी इस अवहेलना की चपेट में आ जाते हैं।

अन्य निर्माण-कार्यों की तरह, शिक्षा विषयक गतिविधि की गहराई में जाना आसान नहीं है। प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा पर व्यय में क्या अनुपात होना चाहिये ? बीच में पढ़ाई छोड़ने और महिला शिक्षा कम होने की समस्या कैसे सुलझायी जानी चाहिये ? प्रौढ़ शिक्षा और स्कूल छोड़े विद्यार्थियों की निरन्तर शिक्षा के लिए क्या किया जाना चाहिये ? शिक्षा का कितना सरकारीकरण होना चाहिये ? पाठ्यक्रम एवं परीक्षा प्रणाली में क्या सुधार वांछित हैं, कितना एकीकरण और समानीकरण होना चाहिये ? विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में वर्तमान प्रणाली कितनी सहायक, और कितनी बाधक है ? अध्यापकों की सुविधाएं और उनका सम्मान कैसे बढ़ाया जाए, और कितने अधिक प्रभावी वे विद्यार्थियों तथा अभिभावकों से निकटतर संबंध से बन सकते हैं ? शिक्षण संस्थाओं के जो निर्धारित लक्ष्य हैं, वे कहां तक पूरे हो रहे हैं ? शिक्षण प्रतिशत बढ़ने से समाज की कितनी समुन्नति हो रही है ? शिक्षा को कैसे समाजोपयोगी अधिक बनाया जा सकता है ? ये प्रश्न हैं, और इनकी श्रृंखला को बहुत बढ़ाया जा सकता है। विचारणीय यह है कि इस प्रकार की समस्याएं समाचारपत्रों का ध्यान क्यों कम आकर्षित कर पा रही हैं, कैसे इनके लिए अधिक ध्यान और स्थान आकर्षित किया जाए।

समाचार पत्रों का दायित्व

इस विषय में प्राथमिक दायित्व किसका है ? समाचार पत्रों का ही मानना होगा। उन्हें राजनीति के प्रति अपना लगाव छोड़कर, राष्ट्र-निर्माण की ओर मुड़ना होगा। जब तक ऐसा नहीं हो पाता, शिक्षण संस्थाओं को स्वयं पहल करनी होगी। जो संबंधित सरकारी विभाग हैं, उन्हें सम्प्रेषण तथा सम्पर्क की व्यवस्था सजग करनी होगी और सुधारनी होगी। जो राजकीय प्रचार तथा जनसम्पर्क विभाग हैं, वे भी मन्त्रियों के श्रीमुख से उच्चरित उद्‌गारों में ही उलझे रहते हैं, चिन्तित और प्रयत्नरत रहते हैं कि कसे अधिक से अधिक मन्त्रियों को पत्र-पत्रिकाओं में स्थान मिल जाय। भूल जाया गया है कि स्वतन्त्रता के बाद मुख्य लक्ष्य राष्ट्रोत्थान है, मन्त्री, सचिव, अधिकारी आदि सामयिक साधना मात्र हैं। वे विकास-प्रक्रिया के प्रेरक तथा संचालक के नाते, जन-प्रतिनिधि तथा जन-सेवक के नाते, समाचार बनते हैं, लेकिन उनका स्वतन्त्र अस्तित्व ही अधिक आदर पा रहा है।

समाचारपत्र हों चाहे सम्पर्क अधिकारी, उनमें स्थिति जनजागरण से ही सुधर सकती है। शिक्षण संस्थाएं इस कार्य में अपने को लगाकर अपनी सार्थकता अधिक बढ़ायेंगी। शिक्षण को कक्षाओं के पाठ्यक्रम तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। जो समय और समाज के विभिन्न अंग हैं, उनमें जागृति तथा निर्माण-वृत्ति का उठाव हो, इसे भी शिक्षण संस्थाओं को अपने लक्ष्यों में शामिल रखना चाहिए। एक अच्छी शिक्षण संस्था जहां चलती है, वहां का सारा वातावरण शालीन, शुभ, संतुलित और समाजसेवी होना चाहिए। ऐसी संस्थाएं, अपनी व्यापक सामाजिक स्वीकृति के प्रभाव से, समाचारपत्रों तथा शासनकर्ताओं को भी रचनात्मक तथा राष्ट्र-निर्माणकारी दृष्टि देने में सफल हो सकती हैं, जिसके बिना शिक्षा विषयक समाचारों को भी भरपूर ध्यान और स्थान नहीं मिल सकता।

□□

शैक्षिक पत्रकारिता की भूमिका

□ डा० संजीव भानावत

शैक्षिक पत्रकारिता, पत्रकारिता का वह सकारात्मक पक्ष है जिसके समुचित विकास से समाज में वैचारिक चेतना तो विकसित होगी साथ ही शिक्षण संस्थाओं के छात्र-अध्यापक समुदाय में आपसी सौहार्द तथा समझ का वातावरण भी उत्पन्न हो सकेगा। शिक्षा संस्थाओं में अन्तर्सम्बन्ध कायम करने का यह माध्यम बन सकता है। उच्च शिक्षा को प्रत्यक्ष रूप से समाज तथा आम जन तक इसके द्वारा पहुंचाया जा सकता है।

साहित्य की भांति पत्रकारिता भी समाज की विभिन्न गतिविधियों का दर्पण है। "समसामयिक घटनाचक्र का शीघ्रता में लिखा गया इतिहास" पत्रकारिता कहा जाता है। समाचारों के संकलन और उनके मात्र प्रस्तुतीकरण के प्रारम्भिक स्तर से लेकर आज तक पत्रकारिता के स्वरूप में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। आज पत्रकारिता सूचनाओं और समाचारों का संकलन मात्र न होकर मानव जीवन के व्यापक परिदृश्य को अपने में समेटे हुए हैं। वह शाश्वत नैतिक-सांस्कृतिक मूल्यों को समसामयिक घटनाचक्र की कसौटी पर कसने का साधन बन गयी है। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य-संस्कृति, आशा-निराशा, संघर्ष-क्रान्ति, जय-पराजय, उत्थान-पतन आदि जीवन की विविध भाव भूमियों की मनोहारी एवं यथार्थ छवि हम युगीन पत्रकारिता के दर्पण में देख सकते हैं।

बहुमुखी प्रवृत्तियां

पत्रकारिता अपनी बहुमुखी प्रवृत्तियों के कारण समग्र मानव जीवन को गहराई से प्रभावित करती है। महात्मा गांधी के शब्दों में "समाचार पत्र का एक उद्देश्य जनता की इच्छाओं-विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है, दूसरा उद्देश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जागृत करना और तीसरा उद्देश्य सार्वजनिक दोषों को निर्भनता-पूर्वक प्रकट करना है।"

गांधीजी के इस कथन में पत्रकारिता की सामाजिक भूमिका की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है। पत्रकारिता देश की जनता की चितवृत्तियों, अनुभूतियों और आत्मा से साक्षात्कार करती हुई मानव मात्र को "जीने की कला" सिखाती है। सत्य की खोज में रत रहते हुए समाज में आदर्श मूल्यों की स्थापना की दिशा में पत्रकारिता की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

हमारे देश में शिक्षा की व्यवस्था काफी प्राचीन समय से ही चली आ रही है। अब तक शिक्षा के स्वरूप में भी समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है तथा उसे अधिकाधिक समाजोपयोगी तथा उद्देश्यपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया है। भारत की विभिन्न योजनाओं को बनाते समय भी

शिक्षा में सुधार की ओर ध्यान भी दिया जाता रहा है। शिक्षा व्यवस्था के गुण-दोषों पर विचार करना हमारा विवेच्य विषय नहीं है। हमें तो यह देखना है कि पत्रकारिता तथा शिक्षा आपस में किस प्रकार जुड़कर विकास तथा निर्माण की दिशा में योग दे सकते हैं।

पत्रकारिता में अब विशेषज्ञता को अधिक प्राथमिकता दी जाने लगी है। रक्षा, वित्त, विदेश, विज्ञान, सांस्कृतिक आदि विभिन्न गतिविधियों के समाचारों के संकलन तथा उन पर फीचर आदि लिखने के लिए प्रायः समर्थ समाचार पत्र पृथक रूप से संवाददाता नियुक्त करते हैं किन्तु शिक्षा का क्षेत्र ऐसा है जिसके लिए हिन्दू आदि कुछ सामाचार पत्रों को छोड़कर शायद ही किसी ने संवाददाताओं की नियुक्ति की हो। इस क्षेत्र की ओर पत्र-प्रबन्धकों का ध्यान प्रायः नहीं जाता है।

आज की पत्रकारिता

आज की पत्रकारिता पर राजनीति बुरी तरह हावी हो गयी है। दिल्ली का राजनैतिक घटनाचक्र ही समाचारों का केन्द्र बिन्दु बनकर रह गया है। यह प्रवृत्ति उचित नहीं कही जा सकती। यहां तक की स्थानीय समाचार पत्र भी स्थानीय जन समस्याओं, जन आकांक्षाओं तथा आम आदमी की तकलीफों को वाणी देने के बजाय राजनैतिक उठा-पठक में ही रुचि दिखाते रहते हैं। एक विद्वान् का यह कथन काफी हद तक यथार्थ प्रतीत होता है कि "आज दैनिक पत्रों में अधिकांशतः उन लोगों का वर्णन रहता है जिन्होंने जीवन संग्राम में हथियार डाल दिए हैं।" हम उन दस व्यक्तियों के बारे में तो पढ़ते हैं जो बेईमानी करते मिलते हैं, पर हम उन लाखों व्यक्तियों के बारे में कुछ नहीं सुनते जिन्होंने अच्छे काम किए हैं। वस्तुतः आज ऐसे समाचारों को प्रमुखता देना आवश्यक है जो पाठक के मन में जीवन के प्रति आस्था, उमंग और विश्वास जगाये तथा राष्ट्र के प्रति प्रेम बढ़ाये। समाचारों के प्रति पत्रकारों का वही दृष्टिकोण होना चाहिए जो एक निर्माता का वस्तु के निर्माण के प्रति होता है। पत्रकारों को समाचारों के तथ्यात्मक तथा प्रामाणिकता की ओर ध्यान देना चाहिए।

शैक्षिक पत्रकारिता, पत्रकारिता का वह सकारात्मक पक्ष है जिसके समुचित विकास से समाज में वैचारिक चेतना तो विकसित होगी साथ ही शिक्षण संस्थाओं के छात्र-अध्यापक समुदाय में आपसी सौहार्द तथा समझ का वातावरण भी उत्पन्न हो सकेगा। शिक्षा संस्थाओं में अन्तर्सम्बन्ध कायम करने का यह सशक्त माध्यम बन सकता है। उच्च शिक्षा को प्रत्यक्ष रूप से समाज तथा आम जन तक इसके द्वारा पहुंचाया जा सकता है।

आज विभिन्न स्तरों पर होने वाले सेमिनार तथा कार्यशालाओं की मात्र सूचना ही पत्रों द्वारा मिल पाती है। अधिक हुआ तो उद्घाटन तथा समापन समारोह के अध्यक्ष और मुख्य अतिथि के भाषणों का उल्लेख मात्र कर समाचार पत्र अपने कर्त्तव्यों की इतिश्री समझ लेते हैं। इन संगोष्ठियों में विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर जो पत्र वाचन किया जाता है, विचार विमर्श किया जाता है तथा निष्कर्ष प्रस्तुत किए जाते हैं वे आम पाठक तक तथा अन्य इच्छुक व्यक्तियों तक नहीं पहुंच पाते। इसी भांति अन्य शैक्षिक गतिविधियों की गहन रिपोर्टिंग का भी प्रायः समाचार पत्रों में अभाव दिखाई देता है। शैक्षिक गतिविधियों पर फीचर लेखन की बहुत बड़ी कमी भारतीय समाचार पत्रों में विशेषकर हिन्दी पत्रों में तो देखी ही जा सकती है।

विविध योजनायें

समाचार पत्रों की अपनी एक सीमा है। उनके साथ व्यावसायिक पक्ष भी जुड़ा रहता है। अतः शैक्षिक गतिविधियों को प्रेरित-प्रोत्साहित करने की दृष्टि से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् जैसी सम्पन्न संस्थाओं को विशेष कदम उठाने की दिशा में कार्य करना होगा। विभिन्न शिक्षा संस्थाओं में पाक्षिक या मासिक बुलेटिनों के प्रारंभ करने की योजना तैयार की जा सकती है। इन बुलेटिनों में न सिर्फ सम्बन्धित शिक्षा संस्था की गतिविधियों की सूचना उपलब्ध हो सकती है वरन् अलग-अलग विषयों पर सार्थक तथा महत्वपूर्ण चर्चा भी हो सकती है। इन बुलेटिनों का व्यापक स्तर पर प्रचार-प्रसार करने की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि ये सीमित क्षेत्र तक ही सिमट कर न रह

जायें। विभिन्न क्षेत्रों में ऐसे बुलेटिनों के पठन-पाठन से हम राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति में भी सहायक बन सकते हैं। जिस साम्प्रदायिक सद्भाव, तथा भावनात्मक एकता के आदर्शों की चर्चा हम भाषणों में यत्र-तत्र करते हैं उसकी मूर्त अभिव्यक्ति इस प्रकार की पत्रकारिता के प्रोत्साहन में संभव है।

देश भर के विश्वविद्यालय आज शोध कार्य में संलग्न हैं। विभिन्न विभागों के प्रतिभावान छात्र और शिक्षक नित नवीन खोज करक तकनीकी-सामाजिक विकास की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। यह शोध कार्य प्रायः पुस्तकालयों की अलमारी में ही बन्द हो के सड़ता रहता है; अतः विद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर पर प्रारम्भ की गयी पत्रकारिता इस दृष्टि से महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। ये बुलेटिन शोध कार्य का सारांश प्रस्तुत कर उसे व्यापक छात्र-शिक्षक एवं जागरूक लोगों तक पहुंचा सकते हैं।

वर्तमान में विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के विभिन्न कॉलेजों में वार्षिक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाता है। इन पत्रिकाओं का स्तर प्रायः बहुत अच्छा नहीं बन पाता। अधिकांश संस्थाओं में यह सामान्य प्रवृत्ति रही है कि हिन्दी के शिक्षक को सम्पादक बना दिया जाता है। शैक्षिक पत्रकारिता की आवश्यकताओं से अनभिज्ञ ऐसे "संपादक" पत्रिका के साथ कितना न्याय कर पाते हैं—इसका विशद् विवेचन किसी अन्य सत्र में किया जा सकता है।

शैक्षिक समाचार समिति

देश भर के अनेक विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता के औपचारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है किन्तु खेद है अधिकांश विश्वविद्यालयों में शैक्षिक पत्रकारिता को पाठ्यक्रम में प्रमुख स्थान नहीं दिया गया है। प्रशिक्षित संवाददाताओं तथा पत्रकारों के अभाव में पत्रकारिता के इस क्षेत्र में अपेक्षित प्रगति संभव नहीं हो सकी है। देश भर में कार्यरत विभिन्न समाचार समितियों की भांति "शैक्षिक समाचार समिति" की कल्पना पर भी विचार किया जा सकता है। इसी प्रकार शैक्षिक विषयों से सम्बन्धित एक "फीचर सेवा" भी प्रारम्भ की जा सकती है। इनके द्वारा समाचार पत्रों को समय-समय पर अपेक्षित स्तरीय सामग्री उपलब्ध हो सकेगी।

शैक्षिक पत्रकारिता के समुचित विकास में रेडियो और टेलीविजन की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण हो सकती है। रेडियो की पहुंच जहां आज दूर-दराज क्षेत्रों तक हो गयी है वहीं दूरदर्शन का भी तेजी से विस्तार किया जा रहा है ताकि वह भी जन-जन तक अपनी बात कह सके। दूरदर्शन की प्रभावी भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता है। यही कारण है कि एन० सी० ई० आर० टी० तथा यू० जी० सी० को इन्सेट 1 बी के द्वारा दूरदर्शन पर प्रतिदिन एक घंटे का समय देने की योजना तैयार की गयी ताकि वे स्तरीय शैक्षणिक कार्यक्रम तैयार कर प्रस्तुत कर सकें। यू० जी० सी० ने इस चुनौती को स्वीकार कर इस क्षेत्र में कार्य प्रारंभ कर दिया है। हाल ही में डा० माधुरी शाह, अध्यक्ष, यू० जी० सी० ने तो दूरदर्शन पर एक पृथक चैनल इस प्रकार के शैक्षणिक कार्यक्रमों को उपलब्ध कराने की मांग की है।

निश्चय ही रेडियो और दूरदर्शन पर छात्रोपयोगी कार्यक्रमों पर गंभीरता से विचार-विमर्श कर तैयार कराया जाय तो यह एक बहुत बड़ा कार्य होगा और "प्रिन्ट मिडिया" जो कार्य अपनी सीमाओं के कारण नहीं कर पाता वह इनके द्वारा संभव हो सकेगा।

□□

विद्यालयी पत्रिकाओं की भूमिका

□ श्रीमती शशि प्रभा गोयल

यह सोचना ग़लत होगा कि आज के छात्र में क्षमता नहीं है। आज का छात्र बहुत अधिक जागरूक है, उसमें अद्भुत सृजनात्मक शक्ति है। साथ ही उसकी जीवनधारा को प्रभावित करने वाले छात्र घटक भी हैं। सिनेमा, रेडियो, दूरदर्शन जहां एक ओर छात्र में ज्ञान को विस्तृत करते हैं, वहां दूसरी ओर छात्र के मन को शिक्षा के क्षेत्र से हटाकर कहीं दूर ले जाते हैं। अतः आज के विद्यार्थी की समस्त शक्तियों को एक सही दिशा प्रदान करने की परम आवश्यकता है और पत्रिका निःसंदेह इस कार्य में सक्रिय योगदान करने में समर्थ हो सकती है। ज्ञान और शिक्षण तकनीक के अत्यधिक विस्तार के कारण विद्यालय की शिक्षा में पूरक सामग्री एक नितांत आवश्यक घटक है जिसे पत्रिका द्वारा भली प्रकार पूरा किया जा सकता है।

विद्यालय स्तर पर शिक्षा में गुणात्मक सुधार की दिशा में पत्रिका की भूमिका के विषय पर विचार करते समय कुछ प्रश्न स्पष्ट रूप से उभर आते हैं। इस स्तर पर शिक्षा से क्या अभिप्राय है ? इसके क्या उद्देश्य हैं ? साधन क्या हैं ? इसकी कौन सी मूल्यांकन विधियाँ हैं और विद्यालय की पत्रिका कहां तक उन उद्देश्यों की पूर्ति में अपनी भूमिका का निर्वाह करने में समर्थ हो सकती है; आदि।

शिक्षा का उद्देश्य

विद्यालय स्तर पर शिक्षा का उद्देश्य बालक के मस्तिष्क में कुछ तथ्यों की जानकारी देना मात्र ही नहीं है। आज के बदलते हुए परिवेश में शिक्षा के आयाम में भी बहुत विस्तार हुआ है। प्राचीन काल में गुरुकुल प्रणाली में बच्चों का जीवन गुरु के समीप बैठकर ज्ञान प्राप्त करके विकसित होता था। उसमें सभी प्रकार के जीवन के मूल्यों को विकसित कर, एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के निर्माण का दायित्व गुरू पर था। आश्रम का पवित्र वातावरण गुरुजनों का शिष्यों के प्रति असीम प्रेम और विस्तृत ज्ञान स्वतः ही विद्यार्थी की जीवनधारा को सही दिशा में प्रवृत्त करने में सहायक होता था परन्तु आज के विद्यालय की स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। आज विद्यालय की शिक्षा मात्र पाठ्य-पुस्तकों में लिखे तथ्यों को रटने और परीक्षा भवन में उगलने तक सीमित रह गई है। पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या के उद्देश्यों को समझने और उनके आधार पर छात्रों के अधिगम को जांचना, परखना, छात्रों के सर्वांगीण व्यक्तित्व के विकास के लिए उपयुक्त शैक्षणिक अनुमति प्रदान करना और, सुधारात्मक उपाय करना तो बहुत दूर की बात है। आज विद्यालय का समूचा शिक्षण मात्र ज्ञान परक ही होकर रह गया है। मानसिक चिंतन के विभिन्न स्तर, बोध, प्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण और सबसे महत्वपूर्ण अंग मूल्यांकन और तुलनात्मक अध्ययन, भौतिक सृजनात्मक

शक्ति का विकास। सद्वृत्तियों का विकास बहुत दूर कहीं पीछे छूट जाता है। इसी के साथ-साथ छात्र के सर्वांगीण विकास में सहायक कुछ विशिष्ट कला कौशलों का अभ्यास भी परम अवमूल्यक है जिसे आज के विद्यालय की शिक्षा में बहुत ही कम महत्व दिया जा रहा है। नैतिक मूल्यों का दिन पर दिन होता हुआ ह्रास, परिवार, समाज और देश के प्रति कर्त्तव्यों की ओर उदासीनता, दिन प्रतिदिन के प्रदर्शन, सरकारी सम्पत्ति की तोड़ फोड़ आदि की घटना क्या आज के शिक्षाविद् के सोचने के लिए पर्याप्त चुनौती नहीं है।

आज के छात्र

यह सोचना गलत होगा कि आज के छात्र में क्षमता नहीं है। आज का छात्र बहुत अधिक जागरूक है, उसमें अद्भुत सृजनात्मक शक्ति है। साथ ही उसकी जीवनधारा को प्रभावित करने वाले छात्र घटक भी हैं। सिनेमा, रेडियो, दूरदर्शन जहां एक ओर छात्र में ज्ञान को विस्तृत करते हैं वहां दूसरी ओर छात्र के मन को शिक्षा के क्षेत्र से हटाकर कहीं दूर ले जाते हैं। अतः आज के विद्यार्थी की समस्त शक्तियों को एक सही दिशा प्रदान करने की परम आवश्यकता है, और पत्रिका निःसंदेह इस कार्य में सक्रिय योगदान करने में समर्थ हो सकती है। ज्ञान और शिक्षण तकनीक के अत्यधिक विस्तार के कारण विद्यालय की शिक्षा में पूरक सामग्री एक नितांत आवश्यक घटक है, जिसे पत्रिका द्वारा भली प्रकार पूरा किया जा सकता है। आज यदि देश को देशभक्त नागरिक, समाज को परोपकारी सदस्य और परिवार को सहिष्णु एवं सद्भावी संबंधियों की आवश्यकता है तो विद्यालय की शिक्षा को भी पाठ्यपुस्तक और पाठ्यक्रम से ऊपर उठकर कुछ ऐसा करना होगा कि जिससे विद्यार्थियों को जीवन जीने की कला आ जाए। स्वार्थ से उपर उठकर परार्थ के लिये त्याग करने में जो आनन्द है उसका व्यसन लग जाए। साहित्य, संगीत और कला में सृजनात्मक योगदान की ऐसी ललक पैदा हो जाए कि उसके बिना वह रह न सके। विश्वबन्धुत्व की भावना और दृष्टिकोण से विविध विद्यार्थी को सोचने समझने की शक्ति प्राप्त हो जाए, और इस सब से भी ऊपर उठकर देश के लिए सर्वस्व बलिदान करने का अवसर पाने में ही जीवन की सार्थकता समझने की प्रेरणा भी प्राप्त हो जाए। ऐसे में आज देश के सम्मुख अनेक समस्याओं का स्वतः ही निदान हो सकता है।

किसी भी उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुछ साधनों की आवश्यकता होती है। जहां एक ओर विद्यालय में पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों की भूमिका है, वहां पत्रिका भी एक महत्वपूर्ण साधन बन सकती है; यदि विद्यालय की पत्रिका का सीधा सम्बन्ध छात्र के जीवन से हो। कोई भी साधन स्वयं में महत्वपूर्ण नहीं होता। उसकी उपयोगिता उसके प्रयोग करने वाले पर निर्भर होता है; जैसा कि कहा जाता है, युद्ध में लड़ाई बंदूक नहीं लड़ती बल्कि वह सैनिक लड़ता है, जो उस बन्दूक के पीछे से निशाना लगाता है। अतः विद्यालय की शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने में पत्रिका निःसंदेह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है यदि उसके उद्देश्य स्पष्ट रूप से निर्धारित हों, साथ ही पत्रिका विद्यालय की सम्पूर्ण पाठ्यचर्या का एक अंग हो और विद्यालय की समस्त गतिविधियां और शैक्षणिक अनुभव उसके पोषक तत्व हों। पत्रिका की गति अविरल निर्बाध्य रूप से छात्र के जीवन को प्रभावित करते हुए उसमें सद्वृतियों का विकास कर सके।

विद्यालयी पत्रिका के उद्देश्य

संक्षेप में विद्यालय की पत्रिका के निम्नलिखित उद्देश्य परिगणित किए जा सकते हैं :

(1) छात्रों की मौलिक सृजनात्मक शक्ति को दिशा प्रदान करना।

(2) पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषयों से संबद्ध चुनौती भरी चिन्तन प्रेरक पूरक सामग्री प्रदान करना और जिज्ञासा उत्पन्न करना।

(3) विद्यालय की गतिविधियों से छात्रों को परिचित कराना।

(4) विद्यालय के परिवेश में रहने वाले समुदाय की समस्याओं पर विचार-विमर्श कर छात्र वर्ग का ध्यान उस ओर केन्द्रित करना।

(5) समुदाय में उपलब्ध संदर्भ ज्ञान और अन्य विविध प्रकार की सहायता प्राप्त करने हेतु विद्यालय और समुदाय के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी स्थापित करना।

(6) पुस्तकालय में उपलब्ध पुस्तकों की समीक्षा और समालोचना।

(7) विविध विषयों में शोध कार्य और परि-योजनाओं की ओर प्रवृद्ध करना।

(8) नैतिक मूल्यों और सद्‌वृत्तियों एवं स्वस्थ अभि-रुचियों का विकास करना।

(9) आकाशवाणी और दूरदर्शन आदि पर प्रसारित शिक्षा विषयक कार्यक्रमों की समालोचना और वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करने की क्षमता का विकास।

(10) नवीनतम शिक्षण तकनीक के आधार पर स्वयं अपने अधिगम को जांचने और परखने का अवसर प्रदान करना।

इन उद्देश्यों की पूर्ति तभी संभव हो सकती है जब विद्यालय की पत्रिका छात्र की और विद्यालय की पाठ्यचर्या से निरंतर अपना सम्बन्ध बनाए रखे और उसका एक अभिन्न अंग बन सके। इसके लिए आवश्यकता है पत्रिका के पोषक तत्वों को विकसित करने की निरंतर चेष्टा जो, पत्रिका को स्वस्थ रखते हुए उसे दीर्घजीवी बना सकें।

विद्यालय स्तर पर पत्रिका का सम्पादन एक अत्यंत श्रमसाध्य कार्य है। अनवरत साधना तपस्या और सतत चिंतन से ही इसको जीवित रखा जा सकता है। इसके लिए विद्यालय के प्रत्येक शिक्षक को अपना योगदान करने के लिए तत्पर रहना होगा। अपने विषय से संबद्ध पूरक सामग्री का निर्माण करना होगा। ऐसे गृहकार्यों का समायोजन करना होगा जो चिंतन प्रेरक हों। ऐसी प्रश्न पहेलियों का निर्माण करना होगा जो छात्र को उद्‌बुद्ध कर सकें उसमें जानने की इच्छा पैदा कर सकें। अपने अपने विषय में छात्रों के लिए ऐसे क्रमिक शिक्षण के कार्यक्रमों की योजना बनानी होगी जिससे प्रत्येक छात्र व्यक्तिगत स्तर पर अपने अधिगम की जांच कर सके और संदर्भ सामग्री द्वारा अपनी ज्ञान पिपासा को शांत कर सके।

विद्यालय की पाठ्यचर्या में छात्रों के लिए शैक्षणिक अनुभवों के अवसर प्रदान करने के लिए विद्यालय के प्राचार्य को तदनुसार ऐसी परियोजनाएं प्रारम्भ करनी होंगी जिससे छात्रों में उपयुक्त अभिरुचियों का विकास हो सके। विद्यालय के पार्श्ववती समुदाय से संबद्ध सर्वेक्षण आयोजित किए जा सकते हैं जिनके आधार पर समुदाय में उभरने वाली समस्याओं का पता लगाया जा सकता है साथ ही समुदाय में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के संदर्भ स्रोतों का पता लगाकर विद्यालय में उनका लाभ उठाया जा सके। समुदाय में अशिक्षित और पिछड़े वर्ग की सहायता के लिए विद्यालय पत्रिका के माध्यम से छात्रों के दैनिक डायरी लिखने का अभ्यास भी पत्रिका का पोषक तत्व हो सकता है। इसके माध्यम से छात्र अपने अनुभव, अपने विचार प्रकट करने की क्षमता को निरंतर विकसित कर सकते हैं और सुन्दर और सशक्त अभिव्यक्ति कर पत्रिका में स्थान दिया जा सकता है।

सुझाव

समूचे विद्यालय की एक पत्रिका विद्यालय के सभी विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकती। अतः ऊपर दिये गये उद्देश्यों की पूर्ति हेतु यह अत्यंत आवश्यक है कि विद्यालय के प्राथमिक, माध्यमिक सभी स्तर के विद्यार्थियों के लिए अपने स्तर के अनुरूप पत्रिका का स्तर हो। अतः प्रारम्भिक रूप में छात्रों और शिक्षा के समन्वित प्रयास से हस्तलिखित ऐसी लघु पत्रिकाओं का सम्पादन करना होगा, जो प्रत्येक छात्र की विविध आव-श्यकताओं और आकांक्षाओं की पूर्ति कर सके। इसके लिए स्टेन्सिल काट कर मुद्रित प्रतिलिपियों का माध्यम सबसे अधिक सुविधाजनक है। आजकल ऐसी मशीनें भी उपलब्ध हैं जो सुलेख, रेखांकन और चित्रों आदि के भी यथावत् स्टेन्सिल काट सकती हैं। ऐसी मशीनों के उपयोग से छात्रों की कलात्मकता को भी बढ़ावा मिल सकता है। अतः सारांश में यह कहना उचित होगा कि विद्यालयी शिक्षा में

पत्रिका निस्संदेह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है यदि इस ओर विद्यालय में समन्वित प्रयास किया जाए।

विद्यालय की लघु पत्रिकाएं मिलकर एक प्रमुख पत्रिका का पोषण कर सकती हैं। इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना शेष है। अन्य क्षेत्रों में मण्डलीय स्तर पर प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं, विज्ञान मेलों का आयोजन होता है, परन्तु अभिव्यक्ति के एक प्रमुख माध्यम पत्रिका पर अभी इतना ध्यान नहीं दिया गया है। अच्छा होगा यदि क्षेत्रीय और मण्डलीय स्तर पर पत्रिकाओं की इसी प्रकार प्रतियोगिताएं आयोजित की जा सकें और प्रतिभाशाली छात्रों और शिक्षकों दोनों को पुरस्कृत किया जा सके। दूरदर्शन के माध्यम से उत्कृष्ट पत्रिकाओं और अच्छे लेखकों के साक्षात्कार विवरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं। साथ ही अच्छी पत्रकारिता के मूलभूत कौशलों पर भी पत्रिका के माध्यम से छात्रों और शिक्षकों को शिक्षित किया जा सकता है। इसके लिए विद्यालय, विद्वान पत्रकारों को विद्यालय में आमंत्रित कर उनसे सह शैक्षिक कार्यक्रमों के अंतर्गत वार्ताओं का प्रबंध करवा सकता है। आवश्यकता है तो केवल इस ओर समुचित योजना की और ध्यान देने की।

प्रबल इच्छाशक्ति

अन्त में यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि किसी भी योजना को प्रभावी बनाने के लिए प्रबल इच्छा शक्ति की आवश्यकता होती है। कोई भी योजना असफल हो सकती है, यदि उसको ऐसे हाथों में सौंप दिया जाए जिनका इस पर विश्वास न हो। इसके विपरीत सतत् श्रम साधना से प्रत्येक योजना में नवप्राण फूंका जा सकता है। अतः वेदों में उपदिष्ट "तेजस्वि नावधीतमस्तु" अर्थात् "हमारा अध्ययन अध्यापन तेजस्वी हो" का उद्देश्य भी तभी पूरा हो सकता है, जब इस ओर समन्वित और सतत् प्रयास किया जाए। जिस प्रकार वाग्देवी ने ब्राह्मण के पास जाकर अनुरोध किया था, कि मुझे ईर्ष्यालु कुटिल खल स्वभाव वाले व्यक्ति को मत देना अन्यथा मैं वीर्यवती न हो सकूंगी, इसी प्रकार आज विद्यालय की पत्रिका का भी शिक्षाविदों से अनुरोध है कि इसे किसी ऐसे व्यक्ति के हाथों न सौंपा जाए जो उसका दुरुपयोग करे। प्रत्युत ऐसे हाथों में सौंपा जाए, जो विवेकानंद की ओजस्वी भाषा से और शंकराचार्य जैसे विद्वानों के ज्ञान गरिमा से जनमानस को आप्लावित कर सके। ऐसी ही पत्रिका निस्संदेह विद्यालय की शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने में अपनी सक्रिय भूमिका निभा सकेगी।

□□

प्रादेशिक समाचार पत्र और शैक्षणिक प्रवृत्तियां

□ डा० मनोहर प्रभाकर

समाचार पत्रों के अपने हितों की दृष्टि से भी मैं कहना चाहूंगा कि शिक्षण जगत की ऐसी अनेक प्रवृत्तियां हैं जिनकी जानकारी पाठकों तक पहुंचाने की यदि व्यवस्था की जाये, तो उनकी लोकप्रियता और प्रसार संख्या में निश्चित ही वृद्धि होगी। समाचार पत्रों में संलग्न पत्रकारों और संवाददाताओं को वह दक्षता प्राप्त है, जिससे वे शिक्षण जगत की प्रवृत्तियों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

पिछले तीन दिन से इस संगोष्ठी में विभिन्न विद्वान-वक्ता शैक्षणिक पत्रकारिता के विभिन्न पहलुओं पर विचार व्यक्त करते रहे हैं। जो पत्र यहां पढ़े गए हैं, उन पर एक दृष्टि निक्षेप करने के बाद मुझे यह प्रसन्नता होती है कि इन पत्रों में बहुत मूल्यवान विचार व्यक्त किए गए हैं और लगभग सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं का स्पर्श किया जा चुका है। इसलिए मैं इस विषय के शास्त्रीय पक्ष पर कुछ न कह कर केवल अपने व्यावहारिक अनुभवपर प्रादेशिक समाचार पत्रों में शैक्षणिक प्रवृत्तियों के प्रकाशन के संदर्भ में कुछ बातें निवेदित करना चाहूंगा। पिछले लगभग तीन दशक से मैं पत्रकारिता, जन सम्पर्क और रेडियो के प्रचार माध्यमों से जुड़ा हूं और इसी नाते इन माध्यमों के अन्तर्गत शैक्षणिक प्रवृत्तियों के प्रचार-प्रसार के परिमाण का एक मोटा अन्दाज मुझे है।

आज की पत्रकारिता

चाहे अंग्रेजी भाषा के पत्र हों या भारतीय भाषाओं के, यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि हमारे समाचार पत्रों में राजनैतिक गतिविधियों और हलचलों के प्रकाशन का बाहुल्य है और सूचना तथा समाचार के नाम पर राजनेताओं के भाषणों का प्रकाशन ही समाचार पत्रों का एक बड़ा भाग रोक लेता है। समाचार और सूचना के नाम में आये दिन घिसेपिटे भाषणों और उपदेशों की बारम्बार की आवृत्ति को मैं एक प्रकार से पाठकों पर अत्याचार मानता हूं। राजनैतिक घटनाओं और गतिविधियों के बाद दूसरा स्थान अपराध समाचारों को मिलता है, जिसमें हत्या, डकैती, बलात्कार आदि के समाचार मुख्यतः होते हैं। कहने का आशय यह है कि सामान्य पाठक के ज्ञान-क्षितिजों का विस्तार करने वाली सामग्री का एक दुखद अकाल सामग्री में लक्षित होता है। जहां तक शैक्षणिक जगत की गतिविधियों का प्रश्न है हमारे समाचार पत्र और उनके संपादक बहुत उदासीन दिखाई देते हैं। कदाचित इसका एक बड़ा कारण यह भी हो सकता है कि दैनिक और साप्ताहिक पत्रों के संपादक शैक्षणिक गतिविधियों के प्रचार प्रकाशन का दायित्व केवल शैक्षणिक

पत्र-पत्रिकाओं पर ही मानते हैं। किन्तु, यह दृष्टिकोण एकांगी है। क्योंकि शिक्षा संबंधी जिन विशिष्ट पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है, उसका पाठक वर्ग केवल स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों तक ही सीमित है। शिक्षा जगत के भीतर क्या घटित हो रहा है, क्या नयी प्रवृत्तियां विकसित हो रही हैं और कौन-सी वे विकृत्तियां हैं जो शिक्षण संसार को दूषित कर रही हैं और साथ ही वे कौन-सी उपलब्धियां हैं जिनका श्रेय शिक्षक समाज को जाता है, इन सभी की जानकारी सामान्य जन को दिया जाना बहुत आवश्यक है, क्योंकि वह सामान्य जन ही इन छात्रों और छात्राओं का अभिभावक है जिनका निर्माण ये शिक्षण संस्थाएं करती हैं। इस दृष्टि से समाचार पत्रों का शैक्षणिक प्रवृत्तियों को उजागर करने का दायित्व और भी बढ़ जाता है। इस प्रसंग में मैं यहां केवल प्रादेशिक समाचार पत्रों की भूमिका पर ही विशेष रूप से कुछ कहना चाहूंगा।

सूचना प्रवाह

बनारस विश्वविद्यालय के प्रो० डा० राममूर्ति ने कल अपने पत्र में यह कहा था कि शिक्षक लोग समाचार पत्रों की आलोचना के प्रति बहुत असहिष्णु हैं और प्रायः वे समाचार पत्रों से कट कर रहना चाहते हैं। मैं यहां यह कहना चाहूंगा कि कट कर रहने की यह प्रवृत्ति ही सूचना प्रवाह में बाधक है। विश्वविद्यालयों में धन की बहुत बर-बादी होने के बावजूद अनेक उलब्धि मूलक कार्य हो रहे हैं। हमारे प्राध्यापक शोध और अनुसंधान के क्षेत्र में नये शिखरों का स्पर्श कर रहे हैं और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर इनके अन्वेषण और कार्य को स्वीकारा जा रहा है। इसी प्रकार महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के परिसरों में आये दिन विचारों को उत्तेजित करने वाले सम्मेलनों और संगोष्ठियों का आयोजन होता रहता है, पर इस सब की जानकारी सामान्य नागरिक को नहीं हो पाती। कहा जा सकता है कि समाचार पत्रों के रिपोर्टर्स इसमें अभिरुचि नहीं लेते। लेकिन तस्वीर का एक-दूसरा पहलू यह भी है कि हमारे विद्वान प्राध्यापक और प्राचार्य अपने गजदन्ति गवाक्षों से उतर कर नीचे नहीं आते, वे समाज की मुख्य धारा से कट गये हैं। अपने ज्ञान के अहम् में कदा-चित वे सामान्य जन के साथ अपने सरोकार की उपेक्षा करते हैं। यह उपेक्षा आत्मघाती है। जैसा कि मैंने अभी-अभी निवेदन किया सूचना-प्रवाह एक मार्गी नहीं हो सकता दोनों और से आदान-प्रदान इसके लिए बहुत आवश्यक है। जन-समाज और शैक्षणिक समुदाय के बीच संवाद की स्थिति जो अभी तक विकसित नहीं हुई है, हमें विकसित करनी होगी हैं। इस कार्य में शिक्षक समुदाय को अपनी अटारी से उतर कर जन-सामान्य के बीच आना होगा। सामान्य-जन और शिक्षण जगत के बीच सेतु बनाने के कार्य में विश्वविद्यालयों के और राज्य सरकारों के जन सम्पर्क अधिकारी बहुत प्रभावी भूमिका अदा कर सकते हैं। लेकिन इसके लिए दोनों ओर से पहल करनी होगी। मैं अपने अनुभव के आधार पर यह कह सकता हूं कि राजस्थान विश्वविद्यालय में आयोजित अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में हुए वैचारिक आदान-प्रदान को समाचार पत्रों के माध्यम से प्रचारित-प्रसारित करने के लिए बहुत मूल्यवान कार्य राज्य के जन सम्पर्क निदेशालय द्वारा किया गया है, लेकिन जब-जब ऐसा हुआ है, वह केवल जन सम्पर्क निदेशालय के स्तर पर की गयी पहल के कारण हुआ है, जिसके मूल में कुछ विशेष व्यक्तियों की रुचि निहित थी। विश्वविद्यालय की ओर से बहुत कम ऐसा होता है कि जब उनके जन सम्पर्क अधिकारी समाचार पत्रों को ऐसे अवसरों पर जोड़ने का प्रयत्न करते हैं। इस गतिरोध को दूर किया जाना आवश्यक है।

कलात्मक विवरण

समाचार पत्रों के अपने हितों की दृष्टि से भी मैं कहना चाहूंगा कि शिक्षण जगत की ऐसी अनेक प्रवृत्तियां हैं जिनकी जानकारी पाठकों तक पहुंचाने की यदि व्यवस्था की जाये, तो उनकी लोकप्रियता और प्रसार संख्या में निश्चित ही वृद्धि होगी। समाचारपत्रों में संलग्न पत्रकारों और संवाददाताओं को वह दक्षता प्राप्त है, जिससे वे शिक्षण जगत की प्रवृत्तियों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए नगर में प्रति सप्ताह कोई न कोई विशिष्ट शिक्षा-शास्त्री, वैज्ञानिक अथवा विशिष्ट पुरस्कार

विजेता लेखक आता ही रहता है। जिस प्रकार समाचार पत्रों के प्रतिनिधि राजनेताओं और फिल्मी अभिनेताओं की तलाश और खोज-बीन में लगे रहते हैं, उसी प्रकार यदि वे विश्वविद्यालय प्रशासन से भी सम्पर्क में रहें, तो उन्हें शिक्षण जगत की विशिष्ट विभूतियों के आगमन की जानकारी समय पर मिल सकती है और वे उनसे साक्षात्कार प्राप्त कर अपने पाठकों को उस व्यक्ति के व्यक्तित्व और कृतित्व से अवगत करा सकते हैं। इसी प्रकार आये दिन राज्य के शिक्षक कला और विज्ञान के क्षेत्र में अनेक नये अनुसंधान करते हैं और राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर सम्मानित होते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के शब्द-चित्र भी समाचार पत्रों के स्तंभ लेखक बराबर तैयार कर सकते हैं; इसके साथ-साथ जो सम्मेलन और सभाएं स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों के परिसरों में आयोजित होते रहते हैं, उनकी रिपोर्टिंग भी सामान्य पाठक की दृष्टि से बहुत उपयोगी हो सकती है।

छात्र जगत की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखें तो हमारे अनेक मेधावी छात्र शिक्षा और खेल-कूद के क्षेत्र में नये-नये कीर्तिमान स्थापित करते रहते हैं, उनके परिचयात्मक आलेख समय-समय पर प्रकाशित होते रहें, तो उससे भावी पीढ़ी के प्रोत्साहन का मार्ग प्रशस्त होता है। मैं तो यहां तक कहूंगा कि जो दैनिक समाचार पत्र समर्थ और सम्पन्न है, उन्हें शैक्षणिक गतिविधियों की रिपोर्टिंग के लिए एक पृथक स्तंभ लेखक रखने की पहल करनी चाहिए। शैक्षणिक प्रवृत्तियों के नाम पर केवल छात्रों और अध्यापकों के हड़तालों, दंगे-फसादों और आये दिन होने वाली पदोन्नतियों की अनियमितताओं को ही नमक-मिर्च लगा कर प्रकाशित करते रहना शैक्षणिक प्रवृत्तियों की रिपोर्टिंग का कार्य क्षेत्र नहीं है। यदि पत्रकारिता को लोक चेतना जाग्रत करने और लोक शिक्षण के माध्यम के रूप में सामाजिक रूपान्तरण लेने की दिशा में प्रभावी भूमिका अदा करनी है, तो हमें इस दिशा में भी सक्रिय होना ही होगा।

□□

समाचार पत्रों के अपने हितों की दृष्टि से भी मैं कहना चाहूंगा कि शिक्षण जगत की ऐसी अनेक प्रवृत्तियां हैं जिनकी जानकारी पाठकों तक पहुंचाने की यदि व्यवस्था की जाये, तो उनकी लोकप्रियता और प्रसार संख्या में निश्चित ही वृद्धि होगी। समाचारपत्रों में संलग्न पत्रकारों और संवाददातों को वह दक्षता प्राप्त है, जिससे वे शिक्षण जगत की प्रवृत्तियों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

विद्यालयी पत्रिकाओं की समस्याएं

रवीन्द्र भारती

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक एक ऐसा सेतु होता है जिसके माध्यम से विद्यार्थी को उसके विषय के भवसागर से पार करते हैं। जितना सुदृढ़ सेतु होता है उतना ही सरल होगा सागर पार करना। अतः विद्यालयों की पत्रिकाओं को अत्यंत उपयोगी और प्रभावी बनाने के लिए शैक्षिक पत्रकारिता की भूमिका बहुत आवश्यक होगी। इसलिए उचित होगा यदि प्रत्येक विषय अथवा संकाय के शिक्षकों को पत्रकारिता की विभिन्न विधाओं यथा लेखन, फीचर, रेखाचित्र, साक्षात्कार, शब्दचित्र, रूपक, रिर्पोताज आदि का सैद्धांतिक ज्ञान और प्रशिक्षण प्राप्त हो।

"**शैक्षिक पत्रकारिता**" इस शब्द से साक्षात्कार करते ही मानस पटल पर इसके क्षेत्र, सीमा और स्वरूप का बिम्ब स्पष्ट-सा होता प्रतीत होने लगता है किन्तु उत्कण्ठा के वशीभूत हो अभिव्यक्ति का प्रयास ज्यों ही किया जाए अनेक विषयों और विधाओं की लहर इस विषय के वृत-बन्धों से इतनी प्रचण्डता से आ टकराती है कि सब कुछ धुंधला जाता है और इस विषय को परिभाषित, सीमांकित तथा स्वरूपबद्ध करना असंभव सा हो जाता है।

"शैक्षिक पत्रकारिता" को यद्यपि शिक्षण काल की किसी भी अवस्था में स्वीकार किया जा सकता है किन्तु यदि स्कूल स्तर पर ही इस विधा का बीजारोपण कर माध्यमिक शिक्षण स्तर तक अंकुरित कोंपलों का उचित लालन पालन किया जाए तो महाविद्यालयी व विश्वविद्यालयी शिक्षण स्तर पर यह विधा अपने यौवन से साहित्य, शिक्षा और पत्रकारिता के जगत को निस्संदेह सुरभित कर सकती है।

ऐसा नहीं है कि "शैक्षिक पत्रकारिता" की उपयोगिता को स्वीकार नहीं किया हो, अन्यथा विद्यालयों में पत्रिकाएं प्रकाशित ही नहीं होती। विद्यालय प्रायः एक वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन तो करते ही हैं। यदि उच्चतर माध्यमिक स्कूलों की पत्रिकाओं की विषय वस्तु का मूल्यांकन किया जाए तो हम पाएँगे कि :

(1) पत्रिकाओं की प्रवृत्ति एक सी है।

(2) पत्रकारिता के सिद्धान्तों एवं मानदण्डों का अभाव है।

(3) विषय वस्तु अशैक्षिक और स्तरहीन है।

(4) अर्थिक साधनों का अभाव है।

आइये इन बिन्दुओं की गहराई में जाने का प्रयास करें।

अधिकांशतः सभी पत्रिकाओं में सामग्री एक ही प्रकाशित होती है। यथा—वार्षिक उपलब्धि विवरण,

प्रधानाचार्य का प्रतिवेदन, वार्षिक आय-व्यय का लेखा-जोखा, खेलकूद व सांस्कृतिक गतिविधियों का उल्लेख व चित्रादि, इधर-उधर से चुराई हुई साधारण और सारहीन कहानियां, चुटकूले, गीत व कविताएं जो एक साधारण मनोरंजन का साधन ही हो सकती हैं। दूसरे शब्दों में हम कहें तो ऐसा प्रतीत होता है मानो ये स्कूली पत्रिकाएं किसी दैनिक के रविवारीय परिशिष्ट जैसी हैं।

पत्रकारिता के सिद्धान्तों और मानदण्डों का अभाव दिखाई देता है क्योंकि सम्पादक मण्डल में पत्रिका के सम्पादन का भार प्रायः साहित्य के ही किसी भी अध्यापक पर डाल दिया जाता है चाहे उसमें पत्रिका के सम्पादन की योग्यता ही न हो। सच तो यह भी है कि सम्पादक मण्डल में विद्यालय के सभी शिक्षकगण एक "टीम भावना" से कार्य करने हेतु उसमें प्रत्यक्ष रूप में समाविष्ट रहते हैं, जबकि व्यवहार में यह मात्र लालसा की पूर्ति का साधन ही है कि इस "टीम भावना" की आड़ में उनका नाम प्रकाशित हो सके।

स्तरहीन और अशैक्षिक विषयवस्तु ही अधिकांश विद्यालयी पत्रिकाओं में निहित होती है, जो उस शिक्षण स्तर के पाठ्यक्रम व अध्ययन मानक से पृथक होती है।

आर्थिक साधनों का अभाव स्कूल पत्रिकाओं के प्रकाशन की राह में बहुत बड़ी बाधा बन जाती है। फलतः उत्कृष्ट मुद्रण, कला, स्किल, चयन, विषयवस्तु, मेकअप आदि पर इस अभाव का सीधा प्रभाव पड़ता है जिससे हतोत्साह ही होता है।

शिक्षक : एक सेतु

शैक्षिक पत्रकारिता के उत्थान और विकास के लिये यह आवश्यक है कि इन मूलभूत व्यवस्थाओं, परम्पराओं, प्रवृत्तियों व अभाव के निराकरण के लिए गहन विचार विनमय हो और समाधान प्रस्तवन हो। इस पत्र में "शैक्षिक पत्रकारिता" के क्षेत्र व महत्व को मैं स्कूली पत्रिकाओं की दृष्टि से देख रहा हूँ अतः उस दिशा में समाधान के लिये मेरा मत निम्न प्रकार है :

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक एक ऐसा सेतु होता है जिसके माध्यम से विधार्थी को उसके विषय के भव-सागर से पार करते हैं। जितना सुदृढ़ सेतु होगा उतना ही सरल होगा सागर पार करना। अतः विद्यालयों की पत्रिकाओं को अत्यन्त उपयोगी और प्रभावी बनाने के लिये शैक्षिक पत्रकारिता की भूमिका बहुत आवश्यक होगी। इसलिये उचित होगा यदि प्रत्येक विषय अथवा संकाय के शिक्षकों को पत्रकारिता की विभिन्न विधाओं यथा लेखन, फीचर, रेखाचित्र, साक्षात्कार, शब्दचित्र, रूपक, रिर्पोताज आदि का सैद्धान्तिक ज्ञान और प्रशिक्षण प्राप्त हो। इसके लिये आवश्यक है कि शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु एक पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाए जिसमें पत्रिका के उद्देश्य, भूमिका प्रकाशय विषयवस्तु चयन, सम्पादन, प्रबन्ध एवं मुद्रण तकनीक व लेखन कि विभिन्न विधाओं, रोचकता व सज्जा आदि का विवेचन हो। ऐसी व्यवस्था हो जाने से इस क्षेत्र में निम्न लाभ अर्जित किये जा सकते हैं :—

(क) शिक्षक अध्ययन-अध्यापन के परम्परागत तरीकों से हटकर अपने विषय को अनोपयोगी बना सकेंगे।

(ख) पत्रिकाओं के सम्पादन, योग्य, कुशल और विषय विशेषज्ञों द्वारा कराना सुलभ होगा।

(ग) शैक्षिक दृष्टि से उत्तम, विद्यार्थियों के लिये महत्व की विषयवस्तु व सामग्री चयनित होकर उपलब्ध होगी।

(घ) प्रकाशन और सम्पादन के दायित्व का निर्वाह वास्तविक रूप में "टीम" द्वारा ही होने लगेगा।

(च) पत्रिकाओं की परम्परागत शैली और प्रवृत्तियों में सामयिक संशोधन हो निखार आ सकेगा।

स्तरहीन विषयवस्तु

जहां तक विद्यालयी पत्रिकाओं में पत्रकारिता के मानदण्डों, स्तरहींन विषयवस्तु का प्रश्न है इस प्रसंग में मेरा मत है कि उपयुक्त होगा, यदि उच्च प्राथमिक स्तर के पाठ्य विषयों में ही एक विशिष्ट अनिवार्य विषय के रूप

में "शैक्षिक पत्रकारिता" का समावेश किया जाए और प्रति विषय, प्रति सप्ताह विद्यार्थियों को एक कालांश में पाठ्य विषय को पत्रकारिता की विभिन्न विधाओं में प्रस्तुत करने का प्रशिक्षण दिया जाए। शिक्षा नीति में ऐसे प्रावधान कर दिये जाने से, "शैक्षिक पत्रकारिता" के विकास का मार्ग प्रशस्त होगा, तथा इस विधा की जड़ें अत्यन्त सुदृढ़ होंगी। इस व्यवस्था से शिक्षार्थी अभिव्यक्ति का सामर्थ्य जुटा सकने में सफल होगा और उसके लेखन व प्रस्तुतीकरण में मौलिकता होगी। विषय को विभिन्न शैलियों में प्रस्तुत करने से उसमें आकर्षण, लालित्य के निर्माण के साथ-साथ भाषा का परिमार्जन होगा।

साधनों का अभाव

आर्थिक साधनों के अभाव को यद्यपि विद्यालय प्रायः पत्रिका शुल्क छात्र से लेकर दूर करने का प्रयत्न करते हैं तथापि यह राशि इतनी अधिक नहीं होती कि इससे अत्यन्त उत्कृष्ट व आकर्षक प्रकाशन किया जा सके—अतः मेरे व्यक्तिगत मतानुसार यह उचित होगा (क) यदि राज्य स्तर पर शिक्षा विभाग अथवा शैक्षिक परिषदें आदि स्कूलों के द्वारा लिए गये शुल्क की राशि का 15 प्रतिशत अथवा 20 प्रतिशत का अनुदान इस कार्य हेतु स्वीकार करें। इसके अतिरिक्त यह भी उपयुक्त होगा कि (ख) राज्य स्तर पर शिक्षा विभागों द्वारा कुछ ऐसी एजेन्सियों का निर्माण किया जाए जो एक विशिष्ट कार्यक्षेत्र के अंतर्गत अवस्थित विद्यालयों के लिये सामग्री का स्रोत बन सके। ताकि राष्ट्र के आधुनिकीकरण व अन्य उपलब्धियों से छात्र पर सीधा क्या प्रभाव हो रहा है उसका बोध उन्हें इनके माध्यम से ही हो।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् तथा पत्रकारिता विभाग, पत्राचार अध्ययन संस्थान ने "शैक्षिक पत्रकारिता" विषय के महत्व को जनोन्मुखी बनाने तथा इस दिशा में कार्य करने हेतु जिस "कार्यशाला" का आयोजन किया है वह कदम निस्संदेह मील का पत्थर साबित होगा और इस विषय के विकास का मार्ग प्रशस्त होगा। मेरा मानना है कि यदि उपर्युक्त व्यवस्थाओं के संदर्भ में कार्यशाला में आवश्यक विचार विनिमय हो तो "विद्यालयी पत्रिकाओं" के प्रकाशन को "शैक्षिक पत्रकारिता" के माध्यम से अति उत्तम बनाया जा सकता है।

□□

शैक्षणिक पत्र-पत्रिकाएं

□ राजेश माथुर

शैक्षणिक पत्रिकाएं स्थायी रूप से प्रकाशित की जा सकती हैं। वे महाविद्यालय स्तर पर हो सकती हैं और राष्ट्रीय स्तर पर भी हो सकती हैं। इस संबंध में पत्रकारों से अतिथि सम्पादन या मानद सम्पादन के रूप में भी सहयोग लिया जा सकता है। पत्रकारिता के छात्रों की सामग्री के लेखन, चयन और सम्पादन का व्यावहारिक अनुभव भी इसके माध्यम से हो सकता है।

कुछ वर्षों पहले तक अनेक समाचार पत्र परीक्षोपयोगी लेखमालाओं का प्रकाशन किया करते थे। उनकी प्रतीक्षा रहती थी। अब ऐसा नहीं होता। लेकिन समाचार पत्रों का दृष्टिकोण भले ही चाहे जो कुछ हो, शिक्षा जगत में इस दिशा में पहल की जा सकती है।

शैक्षणिक पत्रिकाओं का महत्व काफी पहले स्वीकार किया जा चुका है। लेकिन अब तक के उनके प्रकाशनों पर दृष्टि डालें तो स्थिति आशाजनक नहीं लगती।

सामान्यतः शिक्षण संस्थाओं में एक परम्परा चली आ रही है और वह यह कि वार्षिकोत्सव के अवसर पर पत्रिका का प्रकाशन किया जाए। विद्यार्थी और शिक्षक दोनों समुदाय इसमें बड़े उत्साह से कार्य करते हैं। लेखन प्रतिभा को प्रोत्साहन मिलता है, और शिक्षण संस्थान की गतिविधियों के संबंध में संक्षेप में जानकारी भी मिल जाती है।

प्रश्न यह है कि ऐसे प्रकाशनों की उपादेयता और उपयोगिता क्या है?

निश्चित ही यदि सुव्यवस्थित तरीके से कुछ किया जाए तो ऐसे प्रकाशन न सिर्फ शैक्षणिक विकास में सहायक हो सकते हैं बल्कि विद्यार्थियों का मार्गदर्शन भी कर सकते हैं।

शैक्षिक प्रकाशनों की स्थिति

इस संबंध में रोज़गार संबंधी प्रकाशनों को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। कुछ वर्षों पहले तक हालत यह थी कि रोज़गार संबंधी सूचनायें देने वाले अनेक केन्द्र खुले हुए थे। ऐसे केन्द्र आज भी हैं लेकिन उनकी संख्या और महत्व अब उतना नहीं है। ये केन्द्र इस बारे में नज़र रखते थे कि कौन से विभाग में कितने पद रिक्त हैं और फिर रोज़गार चाहने वालों से पैसा लेकर उनको सूचनाएं

दिया करते थे। लेकिन केन्द्र शासन ने जब रोजगार संबंधी सूचनायें देने के लिए पत्र निकाला तो उसकी अच्छी खासी प्रसार संख्या हो गई तथा रोजगार के नाम पर धन कमाने वालों के धंधे भी चौपट हो गये।

आज ऐसी ही हालत शैक्षणिक क्षेत्र में है। पास बुक्स, वन वीक सीरीज और इसी तरह के अन्य प्रकाशन न सिर्फ विद्यार्थियों को भ्रमित कर रहे हैं बल्कि इस आड़ में उनका आर्थिक शोषण भी कर रहे हैं।

शैक्षणिक पत्रिकाएं विद्यार्थियों को इससे बचा सकती हैं। ऐसे प्रकाशन आपसी सहयोग से हो सकते हैं। स्थायी रूप से हो सकते हैं और निःसंदेह विश्वविद्यालय अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से आर्थिक सहयोग भी मिल सकता है। इससे न सिर्फ विद्यार्थियों के शैक्षणिक विकास में मदद मिल सकती है बल्कि उनकी गतिविधियों के संबंध में भी जानकारी मिल सकती है।

सोवियत संघ तथा अफ्रीका और कई अन्य देशों में युवकों से संबंधित पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है। हमारे देश में इसका अभाव अखरता है। यह अभाव ऐसा ही है जैसा कि रोजगार संदेश पत्र के प्रकाशन से पहले था।

स्थायी प्रकाशन

शैक्षणिक पत्रिकाएं स्थायी रूप से प्रकाशित की जा सकती हैं। वे महाविद्यालय स्तर पर हो सकती हैं और राष्ट्रीय स्तर पर भी हो सकती हैं। इस संबंध में पत्रकारों से अतिथि सम्पादन या मानद सम्पादन के रूप में भी सहयोग लिया जा सकता है। पत्रकारिता के छात्रों की सामग्री के लेखन, चयन और सम्पादन का व्यावहारिक अनुभव भी इसके माध्यम से हो सकता है।

कुछ वर्षों पहले तक अनेक समाचार पत्र परीक्षोपयोगी लेखमालाओं का प्रकाशन किया करते थे। उनकी प्रतीक्षा रहती थी। अब ऐसा नहीं होता। लेकिन समाचार पत्रों का दृष्टिकोण भले ही चाहे जो कुछ हो, शिक्षा जगत में इस दिशा में पहल की जा सकती है।

शैक्षणिक संस्थानों की ओर से विद्यार्थियों के लिए पत्रिका के प्रकाशन में दो समस्याएं आ सकती हैं। एक तो उनका व्यय-भार और दूसरा सामग्री का संकलन।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है व्यय-भार उठाना कोई मुश्किल नहीं। इसके लिए एकीकृत कोष बनाया जा सकता है और उसमें सम्बद्ध पक्षों से अनुदान या सहायता ली जा सकती है। यह भार ऐसा है जिसे आसानी से वहन किया जा सकता है।

जहां तक सामग्री जुटाने का प्रश्न है इस संबंध में रचनात्मक प्रतिभा वाले विद्यार्थी भी योगदान कर सकते हैं।

रोचक और पठनीय प्रकाशन

यह आवश्यक नहीं कि ऐसे प्रकाशन परीक्षोपयोगी ही हों। यदि ऐसा हुआ तो वे उकताहट पैदा करने वाले बन जायेंगे। उनको रोचक और पठनीय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि न सिर्फ विद्यार्थियों या शिक्षण संस्थान की गतिविधियों का परिपूर्ण चित्रण ही हो बल्कि उनमें विद्यार्थियों को भी संलग्न किया जाए। खेलकूद, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक और अनेक प्रकार की गतिविधियां हैं जिनका समाचार पत्रों में पर्याप्त प्रकाशन नहीं हो पाता। इसके अनेक कारण हैं और समाचार पत्रों की अपनी समस्याएं हैं। इस कमी को शिक्षा जगत के प्रबुद्ध विद्यार्थी और शिक्षक मिलकर दूर कर सकते हैं। मनोरंजक सूचनाप्रद और शैक्षणिक स्तर को ऊंचा करने वाला या उसमें मार्गदर्शन करने वाला ऐसा प्रकाशन निश्चित ही छात्रों और शिक्षकों की आकांक्षाओं की पूर्ति कर सकता है।

□□

शैक्षिक लेखन के कौशल

□ सत्यप्रकाश शर्मा

आम पत्रकारिता और शैक्षिक पत्रकारिता के विभिन्न आयामों में कोई मूलभूत अंतर है भी नहीं। अंतर हो सकता है क्षेत्र का। उद्देश्य एक ही होता है—अपने-अपने क्षेत्र का परिशोधन एवं परिवर्द्धन करना। वह लेखन की किसी भी विधा द्वारा हो सकता है और किसी भी माध्यम का प्रयोग किया जा सकता है···चाहिए ऐसा लेखन जो आम पाठक तक पहुंच सके और यह तभी हो सकता है जब उसमें आकर्षण हो और आकर्षण के लिए चाहिए कौशल और विधाओं की विभिन्नता।

"कक्षा के किसी खाली कमरे को अभिभावक कक्ष बना दीजिए। समुदाय को प्रेरित करके साज-सज्जा का सामान और फर्नीचर जुटाइये और उससे इस कमरे को सजा दीजिए। समुदाय द्वारा समय-समय पर विद्यालय को दी जाने वाली भेटों (फ्रिज, टी० वी० आदि) को भी इसी कमरे में रख दीजिए। समय तय कर, अभिभावकों से यहां आराम से मिलिए। उनसे उनके बालकों के बारे में बात करिये। और भी कई तरीके हैं जिनसे शिक्षक, परिवारों तक पहुंच सकते हैं और शाला-समुदाय के रिश्तों को मजबूत बना सकते हैं।"

सजीव पत्रकारिता

यह "घर-स्कूल सम्बन्ध" लेख के एक अंश का हिन्दी अनुवाद है जो अमेरिका के ओहियो विश्वविद्यालय द्वारा निकाली जाने वाली शैक्षिक पत्रिका "टिप" (फरवरी 1977, पृष्ठ 33) से उद्धृत है। लेखक ने केवल समस्या सामने रख कर पाठकों को भटकने के लिए नहीं छोड़ दिया, अपितु कई सुझाव भी प्रस्तुत किए हैं। सुझाव भी ऐसे जिन्हें हम अपना कर देख सकते हैं। अमेरिका की शैक्षिक पत्रिकाओं ने घर स्कूल सम्बन्ध में एक प्रकार का आंदोलन-सा छेड़ रखा है। यह है सजीव पत्रकारिता। वे समस्या को हवा में नहीं उछालते हैं बल्कि ठोस माध्यमों के द्वारा उसे धरती पर उतारते हैं। यही पत्रकारिता का धर्म है। विदेशी शैक्षिक पत्र-पत्रिकाओं को उलट-पलट कर हम देखें। शब्द सीमित हो सकते हैं किन्तु समस्या राष्ट्रीय होगी अथवा विश्वजनीन होगी। सुझाव ठोस और प्रयोगात्मक होंगे। न्यूज़ीलैण्ड से प्रकाशित होने वाली शैक्षिक पत्रिका "एज्यूकेशन" का अपना अलग ही रूप है। सुन्दर गैटअप और आलीशान कवरेज। निबंध, फीचर और विशेष विषय आदि, सीधी-सरल और आकर्षक भाषा में प्रस्तुत किए जाते हैं।

लंदन से प्रकाशित होने वाली "जूनियर एज्यूकेशन" की अपनी ही छटा है। विभिन्न विधाओं में शैक्षणिक विषयों पर छोटी-छोटी सारगर्भित रचनाएं देखने को मिलती हैं।

शैक्षणिक समस्याओं को उभार कर, विश्लेषणोपरांत, दिए गए सुझाव देखते ही बनते हैं। पुस्तकों की समीक्षा है लेकिन शैक्षिक पुस्तकों की ताकि छात्र, अध्यापकों और अभिभावक उन पुस्तकों को पढ़ने की ओर प्रेरित हो सकें। इसी प्रकार अमेरिका से प्रकाशित होने वाली शैक्षिक पत्रिका "कप्पन" और इंग्लैण्ड की "दि टाइम्स" प्रकाशन द्वारा प्रकाशित साप्ताहिक शैक्षिक पत्रिका "एज्यूकेशनल सप्लीमेंट" में प्रकाशित होने वाले लेखों को अगर हम पढ़ें, प्रकाशित होने वाली विधाओं पर नजर दौड़ाएं तो फीचर, निष्पक्ष रपट, प्राथमिक शिक्षा की समस्याएं कई स्तम्भ नजर आएंगे। उनकी शैक्षिक पत्रकारिता को दाद दिए बिना नहीं रहा जाता। इन्हें उठा कर, पढ़ने का और चिंतन करने का जी क्यों नहीं चाहेगा ?

शैक्षिक पत्रकारिता की दृष्टि से भारत में प्रकाशित होने वाली शैक्षिक पत्र-पत्रिकाओं को देखें जैसे गुजरात की "नूतन शिक्षक" (गुजराती), दिल्ली की "न्यू फ्रन्टियर्स इन एज्यूकेशन" (अंग्रेजी भाषा), बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के शिक्षा संकाय की "नेशनल जर्नल आफ एज्यूकेशन" (अंग्रेजी भाषा) आदि इनमें अधिकतर लेख इतने बोझिल और भाषा इतनी कठिन होती है कि आम पाठक इन्हें शायद ही उठाए। निबंधों के सिवाय अन्य विधाओं का तो यहां अकाल-सा है। मेरा आशय यहां आलोचना का नहीं है बल्कि सवाल है सम्प्रेषणीयता का, लेखकों का एवं उनके लेखन सामग्री, शैली, विधा, कथ्य और प्रस्तुति का। मैं बेहिचक कह सकता हूं कि शैक्षिक लेखन में हम विदेशों की अपेक्षा काफी पिछड़े हुए हैं। वे आम पत्रकारिता को शैक्षिक पत्रकारिता में बदल रहे हैं।

सामग्री

आम पत्रकारिता और शैक्षिक पत्रकारिता के विभिन्न आयामों में कोई मूलभूत अन्तर है भी नहीं। अन्तर हो सकता है क्षेत्र का। उद्देश्य एक ही होता है—अपने-अपने क्षेत्र का परिशोधन एवं परिवर्द्धन करना। वह लेखन की किसी भी विधा द्वारा हो सकता है और किसी भी माध्यम का प्रयोग किया जा सकता है···चाहिए ऐसा लेखन जो आम पाठक तक पहुंच सके और यह तभी हो सकता है जब उसमें आकर्षण हो और आकर्षण के लिए चाहिए—कौशल और विधाओं की विभिन्नता। लंदन की "जूनियर एज्यूकेशन" के पन्ने पलटते-पलटते पृष्ठ-3 पर के लेख ने रुकने को विवश कर दिया। लेख "पाल हालिंग" का था और शीर्षक था—"क्या आपकी कक्षा में अधिकांश बालक गणित से भयभीत रहते हैं ?" पत्रिका का प्रथम पृष्ठ देखा, अक्टूबर 1979 की थी। सोचा विषय सार्वजनीन है और आज भी रुचि से पढ़ा जा सकता है। यहां अन्तर है साधारण लेखन और शैक्षिक लेखन में। शैक्षिक लेखन स्थायी महत्व का होता है जो संदर्भ मूल्य के रूप में उभरता है।

लेख भावनात्मक शैली में लिखा गया था और प्रारंभ सुन्दर था। लेख को पढ़ गया। महसूस हुआ मानो किसी छात्र ने मेरे सम्मुख, गणित पढ़ने में जो कठिनाइयां आती हैं, वे तमाम एक-एक कर रख दी हैं। आश्चर्य है कि उन कठिनाइयों पर मैंने कभी ग़ौर नहीं किया, सम्भवत: अधिकांश आध्यापकों ने भी नहीं किया होगा। बालकों की ऊब का हम कभी ध्यान रखते हैं ? क्या गणित को सरस ढंग से पढ़ाने की हमने तरकीब सोची है ? क्या गणित को सरल बनाया जा सकता है ? लेखक ने विभिन्न सुझावों से अंत में सिद्ध कर दिया कि गणित को सरल बनाया जा सकता है। सुझाव अनुभव पर आधारित हैं जिन्हें कोई भी अपना सकता है। शुरू से अन्त तक क्रमबद्धता का निर्वाह लेख में हुआ है। भाषा सरल है। लेखन के प्रति इमानदारी का पता लेख के विश्लेषण और उसकी प्रस्तुतीकरण की वस्तुपरकता से लगता है। लेखक ने पाठकों के लिए एक चुनौती खड़ी कर दी कि आप भी ऐसा करके देखिये और परखिये।

विषय गणित ही क्यों ? विज्ञान को भी हम सहजता से पढ़ा सकते हैं। अक्टूबर 1982, पृष्ठ 9 पर इसी पत्रिका में पॉल ब्रिटिन का एक लेख है जिसमें विवरणात्मक शैली में इस बात को सिद्ध किया गया है। शीर्षक रोचक है—"साबुन के बुलबुलों से पढ़ाइये"। लेख पढ़ा तो महसूस किया कि कमाल है इतनी छोटी-सी बात दिमाग़ में नहीं आई, साबुन और पानी की मदद से बुलबुलों को हवा में तैराइये और नन्हें-मुन्नों को आकार, भार, गति, दिशा आदि का ज्ञान दीजिए। लेखक ने बहुत ही रोचक ढंग से सहज मगर आकर्षक शब्दों में अपने विवरण द्वारा एक

गहरी बात खोलकर रख दी जो शायद आम पाठक के ध्यान में न हो। भाषा की पकड़ मज़बूत थी।

सार्थक प्रयास

इन दोनों लेखों को पढ़ने से पता लगा कि लेखकों ने सार्थक प्रयास किया है। वे पाठकों को जो कुछ बताना चाहते थे उसे पाठकों ने अवश्य समझा होगा। यही लेखन की सफलता है। यह एक अलग बात है कि निबंध की शैली कौन-सी हो…कोई भी शैली हो, मुख्य बात है, पाठकों को प्रेरित करना, जानकारी देना और अपने विचारों को सही ढंग से पाठक तक सम्प्रेषित करना और भविष्य की एक तस्वीर खींच पाना। मार्च 1984 के अंक, पृष्ठ 30 में—अमेरिकन शैक्षिक पत्रिका "लर्निंग" जो कि कॉलरेडो से प्रकाशित होती है, उसके एक लेख में यह सिद्ध किया गया है कि आने वाले समय में, कम्प्यूटर अध्यापक का स्थान ले सकते हैं।

बात कम्प्यूटर की हो और चाहे कठपुतली की। शैक्षिक निर्माण में वे क्या सहयोग दे सकते हैं; आवश्यकता है, इसे सिद्ध करने की। हमारी कठपुतली कला अंतिम सांसें गिन रही है। हम अपनी शैक्षिक पत्रकारिता द्वारा उसकी कठिनाइयों और उनके निराकरण हेतु ठोस सुझावों को रखने में असफल रहे हैं। शिक्षा जगत में इनकी उपादेयता पर लगे प्रश्न चिह्नों को दूर नहीं कर पाए हैं। इसके विपरीत न्यूज़ीलैण्ड में भी इसी से मिलती-जुलती कला का शिक्षा के माध्यम के रूप में 1950 से प्रयोग चल रहा है वह कला है—"शैक्षिक थियेटर"। इनमें सजीव पात्र अभिनय करते हैं, नाटक करते हैं। वहां, यह कला भी कठिनाइयों के दौर से गुज़र रही है। शैक्षिक थियेटर शालाओं का भ्रमण करते हैं और नाटकों के द्वारा छात्रों में शैक्षिक विषयों एवं अभिनय के प्रति रुचि उत्पन्न करते हैं। नाटक का विषयानुरूप संचालन किया जाता है। यह सारी जानकारी लेखक फिलिप ने, न्यूज़ीलैण्ड से प्रकाशित होने वाली नं० 3, 1981 की "एज्यूकेशन" पत्रिका में दी है। यह एक फीचर है, मैं पूरा फीचर रुचि से पढ़ गया। शैक्षिक थियेटरों की उपादेयता को तो लेखक ने सिद्ध किया ही है उनकी कठिनाइयों को बताते हुए अपने सुझाव भी रखे हैं। भाषा का गठन और लिखने की शैली से लगा कि लेखक ने खुद उनको देखा है, उनकी कठिनाइयों को सुना है और फिर भावों तथा अनुभूतियों का सहारा लेकर, कुछ बातों का अन्वेषण करते हुए दिलचस्प तरीके से उसे पाठकों के सामने रख दिया। हमें भी इस शैली को अपनाना है। विधा रोचक है। छोटा कलेवर होता है, भाषा का अपव्यय नहीं, नीरसता और दुरूहता से दूर, पाठकों को पकड़ने में माहिर है। ज़रूरत है—निरंतर लेखन और अभ्यास की।

नयी विधा

अभ्यास और साथ में अपने लेखन की कमजोरियों के प्रति सजगता भी शैक्षिक लेखन में चाहिए। हमें नयी विधा अपनाने और उस पर परिश्रम करने की लगन चाहिए। हम कई बार सम्पादकों को पत्र लिखते हैं कि फलां का लेख अच्छा लगा या नीरस लगा। इसी बात को अगर हम जरा रोचक शैली में खुल कर लिखें और यह बताएं कि लेख अच्छा और नीरस क्यों लगा इसे रोचक बनाने के लिए अपने सुझाव प्रस्तुत करें इसके लिए निश्चित रूप से लेख के विषय का विश्लेषण करना पड़ेगा और अपने रचनात्मक दृष्टिकोण से परिचित करवाना पड़ेगा। इस प्रकार एक नई बात, नई विधा की अपनी ही रोचकता है—ज़रूरत है इसे तराशने, मांजने और प्रयोग में लेने की। हां, पुनर्लेखन कुछ अधिक करना पड़ सकता है।

पुनर्निरीक्षण तो हर विधा में करना ही पड़ता है। अपने लिखे हुए पर हमें नजर तो बार-बार दौड़ानी ही पड़ेगी। संशोधन भी करने पड़ सकते हैं। इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि लेखक पुराना है या नया, उसने फीचर लिखा है या पत्र, निबंध लिखा है या रपट। रपट लिखना भी अपने आप में एक आनंद का विषय है, पर है परिश्रम भरा, चुनौतीपूर्ण। नज़र और कानों के साथ-साथ अंकन कर पाने की तेज़ी भी अपेक्षित है। शैक्षिक लेखन में समाचार संकलन हेतु विभिन्न शैक्षिक गोष्ठियों, सम्मेलनों आदि में भाग लेना पड़ता है। सम्मेलन के उपरांत हमें शैक्षिक-पत्रिकाओं के लिए रपट लिखनी होती है। दैनिक अखबारों में भी इस विषय पर समाचार छपेगा लेकिन हम उसे रपट नहीं कह सकते। मात्र सम्मेलन की कार्यवाही का ज़िक्र

कर देना और ख़ास-ख़ास व्यक्तियों की दो चार बातें दे देने से मेरे विचार में रपट नहीं बन जाती।

इंगलैण्ड के 28 सितम्बर 1984 के "एज्यूकेशनल सप्लीमेंट" में पृष्ठ 6 पर साराह बेलिस की रपट "अभिभावकों के सहयोग से बालकों के अध्ययन को सहारा मिलता है।" पूरी रपट पढ़ कर जहां एक ओर विधा पर पकड़ की प्रशंसा करनी पड़ी तो दूसरी ओर अपने कर्त्तव्य और जिम्मेवारियों के प्रति सोच उत्पन्न हुआ, अपने बच्चों की पढ़ाई में सहयोग देने की भावना को बल मिला। सम्मेलन सर्वसम्मति से जिस मुद्दे पर सहमत हुआ उसके निष्कर्ष से रपट की शुरूआत की गई। उसके बाद मुख्य-मुख्य वक्ताओं का परिचय और उनके वक्तव्यों के चयनित अंश तथा साथ साथ में अपनी टिप्पणियां, ऐसे क्रमवार प्रस्तुत की गई कि न कहीं तोड़ और न अनुचित जोड़। कुल मिला कर पाठक को अपने साथ सहज गति से ले जाने का गुण रपट में था।

पूरी रपट पढ़ कर लगा कि रचनाकार ने पूरी इमानदारी से सम्मेलन की पूरी कार्यवाही को अपनी आखों से देखा और कानों से सुना है। संभाषियों के वक्तव्यों में से काम के अंश छांटने में परिश्रम किया गया है और अपनी टिप्पणियां देने में संकोच नहीं दिखाया गया है—बेबाक निष्पक्ष टिप्पणियों ने रपट को सार्थक बना दिया। इसी मुद्दे पर पिछले सम्मेलन और उनके निष्कर्ष, संबंधित स्थल पर देने में भी रचनाकार ने भूल नहीं की।

हमारे दिमाग़ में संभवत: इस विषय पर इंगलैण्ड की शिक्षा व्यवस्था कोई आदर्श रूप लिए हुए रही हो किन्तु एक ही झटके में पता लग गया कि वहां भी लापरवाही है। अपने बालकों के भविष्य के प्रति अभिभावकों में कोई अधिक चेतना नहीं है। अपनी शैक्षिक व्यवस्था की कमजोरियों को निष्पक्षता से प्रकट करने का गुण हमें होना ही चाहिए।

नई विधा

अन्य देश या राज्य की शैक्षिक व्यवस्था का जिक्र हम भी कर सकते हैं। अपने दृष्टिकोण से उनकी शैक्षिक ढांचे की आलोचना-समालोचना करना संभव है—विदेशी लेखकों के लेखों के आधार पर नहीं। संभव है उनके आधार पर हम सही बात न दे पाएं। यह तभी संभव होगा जबकि हमने वहां की यात्रा की हो··· वहां की शिक्षा व्यवस्था को देखा हो, वहां के जनजीवन में घुले मिले हों और वहां की शैक्षिक व्यवस्था से जुड़े लोगों से बातें की हों। इन सब बातों को क्रमवार, दिलचस्प ढंग से हम लिख डालें तो यह हमारे शैक्षिक पत्रकारिता जगत के लिए एक नई विधा का काम कर सकती है जिसे हम यात्रा वर्णन कह सकते हैं। हां, बस इतना हमें ध्यान रखना है कि भाषा जनता की हो जहां हम गए हों, वहां के स्थानों के नाम, स्कूलों के नाम, जिनसे शिक्षा संबंधी बातें की हों उनका नाम, कक्षा में छात्रों की संख्या आदि यानी गहराई से पूरी यात्रा की उन बातों का वर्णन करना है, जिन बातों से वहां की शैक्षिक व्यवस्था का पता लगता हो। वहां के जन-जीवन का परिचय भी अगर हम यात्रा वर्णन में दें तो यह रोचक बन जाएगी लेकिन यह हो शैक्षिक संदर्भ में। हो सकता है यात्रा कर लेने के उपरांत भी हम लिखने की हिम्मत न जुटा पाएं। कोई बात नहीं स्वयं ही कोई आपसे साक्षात्कार करने चला आएगा या आप चाहें तो किसी अनुभवी व्यक्ति को बुला कर साक्षात्कार दे सकते हैं।

साक्षात्कार, शैक्षिक लेखन के अंतर्गत हमें करना पड़ सकता है। समाचार संग्रह के लिए हमें अध्यापकों, अभिभावकों, छात्रों, शिक्षा प्रशासनिक अफसरों, प्राचार्यों, शिक्षा मंत्रियों आदि से मिलाना ही होगा। अगर साक्षात्कार देने वाला व्यक्ति अति व्यस्त है तो हमें पहले से समय तय कर लेना चाहिए। वैसे व्यक्तिगत संबंधों की बात अलग है। हम भेंटकर्ता से पूछे जाने वाले प्रश्नों को अगर पहले से ही तैयार कर लें तो सुविधा रहेगी। वार्ता के विषय का गहरा ज्ञान आवश्यक है, क्योंकि कई बार पुरानी बातों का हवाला देकर हमें अपने प्रश्न का उत्तर निकलवाना पड़ सकता है। इस दौरान आपस में घरेलू या व्यक्तिगत बातें भी हो सकती हैं। संबंध तो उनका विषय से होगा किन्तु लहजा मजाक का हो सकता

है। ऐसी बातों का समावेश अपने साक्षात्कार में न करें। किसी भी शिक्षाविद से साक्षात्कार करते समय हमसे यह अपेक्षा की जाती है कि हम तत्कालीन शैक्षिक जानकारियों से तो परिचित हों ही लेकिन भूत और भविष्य की शैक्षिक हलचलों की भी जानकारी रखते हों। हमारी एक आध शैक्षिक पत्रिका ने इस विधा पर काम करना तो शुरू किया है किन्तु उनमें कुछ नीरसता दिखाई देती है। प्रश्नों की सूत्रबद्धता एवं प्रश्न ठीक ढंग से न कर पाना। फलस्वरूप सटीक उत्तरों का न आ पाना आदि कमियाँ खटकती हैं। अवश्कता है परिश्रम की।

परिश्रम तो हर प्रकार के लेखन में करना ही होगा। कहानी लिखने में भी कम परिश्रम नहीं करना पड़ता। कहानी की रोचकता से सभी परिचित हैं। साहित्य में कहानियां नई-नई विधाओं में लिखी जा रही हैं पर शैक्षिक लेखन में इनका अभाव बहुत ही खटकता है। समाचार कहानी लिखने का गुण भी हम पैदा करें तो निश्चित रूप से शिक्षा निर्माण में यह विधा अच्छा सहयोग देगी। समाचार कहानी को हम किसी भी शैली में लिखें इसका प्रारम्भ रुचिप्रद ढंग से हो और फिर कदम-ब-कदम हम आगे बढ़ें··· उद्देश्य एव रुचि कायम रखते हुए अंत की ओर बढ़ें। विषय चयन करने के लिए आप स्वतंत्र हैं। शैक्षिक लेखन हेतु विधाएं और भी चुनी जा सकती हैं बहस छेड़ना, संस्मरण, परिचर्चाएं आदि। जरूरत इस बात की है कि हम दिशा निश्चित कर लें।

दिशाहीन पत्रकारिता

भारत की शैक्षिक पत्रकारिता पर दृष्टि डालने से लगता है कि हमारे शैक्षिक लेखक को कोई निश्चित दिशा नहीं मिल पा रही है। हम कुछ भ्रमित से नजर आ रहे हैं। शैक्षिक पत्रकारिता में इतनी विधाओं के होते हुए भी हम किसी विधा को ढंग से नही पनपा पा रहे हैं। न इसका कोई स्वरूप निर्धारित कर पा रहे हैं। कभी लगता है कि हम अपने कार्य को ढंग से निभा नहीं पा रहे हैं तो कभी महसूस होता है कि हमारी इस ओर रुचि ही नहीं है या फिर हम इसे गंभीरता से नहीं ले रहे हैं। हम जो कुछ भी लिख रहे हैं उसमें कहीं प्राण नज़र नहीं आ रहा है। एक ठहराव सा दिखता है। शैक्षिक जगत का जितना प्रचार-प्रसार है उतनी ही इसमें समस्यायें भी हैं और वह काफी लम्बे काल से महसूस की जा रही हैं तो क्या हम मानें कि हम उन समस्याओं में छिपी अन्तर्घटनाओं का खुलासा नहीं कर पा रहे हैं ? सही परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण कर पाने में सुस्ती क्यों ? कई मामलों में सच्चाइयां भी हैं, अच्छाइयां भी हैं। वे दबी ढकी क्यों हैं ? उनका सत्य पक्ष उजागर क्यों नहीं हो पा रहा है ? लगता है हम अपनी शिक्षा व्यवस्था की कमियों को प्रकट नहीं करना चाहते, सत्य को सामने लाने में झिझक रहे हैं, संकोच कर रहे हैं। आखिर क्यों ? कोई भी सत्य अपने आप में अंतिम नहीं होता। हो भी नहीं सकता, आज के सत्य का कल कोई दूसरा पहलू हो सकता है···फिर उसे सामने लाने में भय क्यों ?

मैं यह नहीं कहता कि भारत में इस दिशा में कुछ नहीं हो रहा है। हो रहा है, किंतु कौशलपूर्ण नहीं। चंद लोग वर्षों से शैक्षिक लेखन कर्म से जुड़े हुए हैं। इन्हें पढ़ कर लगता है कि ये लोग वर्षों से अध्ययनरत हैं और जो कुछ पढ़, समझ और अनुभव कर रहे हैं, उसे व्यक्त करने में लगे हुए हैं। इनके लेखों में रचनाधर्मिता के प्रति इमानदारी का झलक है, सृजनता की गहनता है और नए विचारों की सूझ-बूझ है, पर इतने से शैक्षिक निर्माण कैसे होगा ? लेखक को चाहिए—ऐसे कठिन तथ्यों को सरलतम रूप में प्रस्तुत कर सके। शिक्षा जगत में उभर रहे प्रश्नों का समाधान ढूंढ़ सकें और उन समाधानों पर पुनः प्रश्न कर सकें। इस दिशा में हम सुस्ती दिखा रहे हैं, यही कारण है कि अभी तक शैक्षिक लेखन अपनी उपादेयता का कोई सबूत नहीं दे पाया है। इसके कई कारण हो सकते हैं। कोई भी बड़ा पत्र-समूह इस दिशा में रुचि नहीं ले रहा है। लेखक छपते नहीं हैं तो निराश होते हैं, पर धैर्य का गुण भी लेखक में होना ही चाहिए। निरंतर लेखन हममें विश्वास बनाए रखता है और इसी विश्वास के बलबूते पर हमारे पास जो कुछ और जितना है उसको सक्षम, रोचक और आकर्षक बनाना है। शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं की सही जानकारी उनका विश्लेषण और वैकल्पिक रचनात्मक सुझाव यानी

लोगों को अपना अभिमत बनाने का पूरा मसाला देना है।

इन सब कौशलों को ध्यान में रखते हुए, हमें आगे बढ़ना है। अपनी शैक्षिक व्यवस्था को मजबूत करना है और इसके विकास में जुटना है। आने वाली शैक्षिक कठिनाइयों को समझना है, उनके समाधान प्रस्तुत करने हैं, ताकि शिक्षा का निर्माण उचित गति और सही रूप में हो सके। यह काम शैक्षिक लेखन ही कर सकता है बशर्ते यह कौशल-पूर्ण हो।

□□

आम पत्रकारिता और शैक्षिक पत्रकारिता के विभिन्न आयामों में कोई मूलभूत अन्तर है भी नहीं। अन्तर हो सकता है क्षेत्र का। उद्देश्य एक ही होता है—अपने-अपने क्षेत्र का परिशोधन एवं परि-वर्द्धन करना। वह लेखन की किसी भी विधा द्वारा हो सकता है और किसी भी माध्यम का प्रयोग किया जा सकता है···चाहिए ऐसा लेखन तो आम पाठक तक पहुंच सके और यह तभी हो सकता है जब उसमें आकर्षण हो और आकर्षण के लिए चाहिए—कौशल और विधाओं की विभिन्नता

विद्यालय-पत्रिका का संश्लेषण

□ जी० एस० जौली

पत्रकारिता—समाचार-पत्रों, पत्रिका तथा प्रसारणों के लिए जन-सूचना, जनमत तथा लोक-मनोरंजन संबंधी लेखों के संकलन, संसाधन तथा प्रचार-प्रसार का एक सुयोजित एवं विश्वसनीय तरीका है।

संचार एक ऐसी कुशल कार्य-विधि का अध्ययन है जिसके द्वारा संकेत चिह्नों के प्रसारण में मदद मिलती है। इसे जनसंचार भी कह सकते हैं। क्योंकि इसका अर्थ है—ऐसे संचार की कला तथा कौशल का अध्ययन जिसमें समाचार-पत्र, पत्रिका, रेडियो, टेलिविजन, सिनेमा तथा किताबें शामिल हैं।

शिक्षा उस प्रक्रिया का परिणाम है, जिसके द्वारा व्यक्ति समाज जिसमें वह रहता है और काम करता है, की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालता है। इसलिए यह आवश्यक है कि स्कूल तथा कालिज की शिक्षा तेजी से बदलते हुए परिवेश से संबंधित हो। किसी भी शैक्षिक विधा की उपादेयता, उसका महत्व इस बात पर निर्भर है कि वह कैसे व्यक्ति और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप है।

पत्रिका, पत्रकारिता जैसे कार्य के लिए एक निर्गम मार्ग है। दूसरे निर्गम मार्ग हैं—समाचार-पत्र, रेडियो, टेलिविजन—और पत्रकारिता स्वयं में संचार का एक हिस्सा है। पत्रकारिता और संचार में फर्क क्या है, उनकी पहचान क्या है—इसका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

पत्रकारिता—समाचार-पत्रों, पत्रिका तथा प्रसारणों के लिए जन-सूचना, जनमत तथा लोक-मनोरंजन संबंधी लेखों के संकलन, संसाधन तथा प्रचार-प्रसार का एक सुयोजित एवं विश्वसनीय तरीका है।

संचार एक ऐसी कुशल कार्य-विधि का अध्ययन है जिसके द्वारा संकेत चिह्नों के प्रसारण में मदद मिलती है। इसे जन-संचार भी कह सकते हैं क्योंकि इसका अर्थ है—ऐसे संचार की कला तथा कौशल का अध्ययन जिसमें समाचार-पत्र, पत्रिका, रेडियो, टेलिविजन, सिनेमा तथा किताबें शामिल हैं।

तब पत्रिका क्या है? हम सभी जानते हैं कि पत्रिका क्या है। पत्रिका देखने पर किसी को भी इसे पहचानने में कठिनाई नहीं होती। फिर परिभाषा की क्या आवश्यकता है? केवल इसलिए कि अपने ज्ञान की परख का प्रयोग कभी-कभी ऐसी वस्तुओं के अध्ययन से जिसे

पहले हमने कभी देखा न हो या सराहा न हो, हमारी समझ और बुद्धि के विकास में सहायक होता है। स्कूल पत्रिका की एक संभव परिभाषा है :

> "एक पत्रिका विभिन्न लेखकों के लेखकों की एकपत्र-पुस्तिका है तथा एक हल्के-फुल्के मनोरंजन का साधन है"। पत्रिका पहले एक ऐसी पत्रिका कही जाती थी जिसमें प्राय: चित्रित कहानियां तथा रेखाचित्र होते थे। अब पत्रिका ने अपनी पहचान बनाने की लड़ाई जीत ली है। एक नवीन परिभाषा के अनुसार "पत्रिका एक ऐसा प्रकाशन है जो आमतौर पर पत्रावरणबद्ध सचित्र पुस्तक है और जो निश्चित समय पर नियमित रूप से प्रकाशित होती है तथा जिसमें विज्ञापनों के साथ-साथ विभिन्न लेखकों की कहानियां तथा लेख आदि प्रकाशित होते हैं"।

अपने "अमेरिकन पत्रिका के इतिहास" में डीन मॉट (फ्रेंक लूथर मॉट) पत्रिका को आमतौर पर नियमित रूप से निकलने वाली एक पैम्फलेट अथवा पुस्तिका जिसमें विभिन्न प्रकार की पठनीय सामग्री होती है, परिभाषित करते हैं।

"विभिन्न प्रकार की पठनीय सामग्री" यही एक ऐसी शर्त है जो पत्रिका और पुस्तक में अंतर दर्शाती है और इस बात की स्पष्ट सूचक है कि पत्रिका में गद्य और पद्य का एक समान प्रकाशन अनिवार्य है और उसे सबकी पसंद का होना चाहिए।

पत्रिका विभिन्न उपयोगी विषयों से संबंधित भी हो सकती है। उदाहरण के लिए—व्यापार पत्रिका में सम्पादकीय टिप्पणियाँ, लेख, विज्ञापन, फोटोग्राफ, समाचार, कहानियां तथा अन्य पठनीय सामग्री प्रकाशित होती हैं।

यह वास्तव में एक चुनौतीपूर्ण अनुभव है जब स्कूल पत्रिका में किसी ऐसे विषय पर लिखने को कहा जाए जो भारतीय शैक्षिक विधा और विद्यार्थी समुदाय के साथ संप्रेषण प्रणाली में लगभग है ही नहीं। अपनी गहन खोज तथा तलाश में, मैं प्रसिद्ध अंग्रेज कवि रुडयार्ड किप्लिंग के तात्पर्य भाव से प्रभावित हुआ हूँ। वे एक समय स्वयं पत्रकार थे और उन्होंने तुकांत कविता में बताया कि कैसे एक कहानी का विकास किया जा सकता है :

> "मैंने छ: ईमानदार काम करने वाले लोगों को रखा उन्होंने मुझे सिखाया वह सब कुछ जो मैं जानता था, उनके नाम थे—क्या, कहां कब और कैसे, क्यों और कौन"

> "I kept six honest serving men
> They taught me all I know
> Their names were, What, and Where, and
> When and How and Why and Who"

चूंकि स्कूल पत्रिका के विषय में उसके उद्देश्य, तकनीकी तथा प्रयोग के बारे में विशेष तथ्य तथा सूचनाएं उपलब्ध नहीं हैं इसलिए मैंने उन संस्थाओं से प्रेरणा लेने की कोशिश की है जहां स्कूल पत्रिका एक प्रबुद्ध अवधारणा पर आधारित है और जो स्कूल की शिक्षा नीति से जुड़ी है।

मेरी धारणा है कि किसी भी स्कूल के लिए बहुत कम कीमत पर नियमित रूप से पत्रिका का प्रकाशन संभव है। वास्तव में यह एक साधारण काम है। सारी प्रक्रियाएं कक्षा में ही नियोजित हो सकती हैं और निश्चित रूप से इसका शैक्षिक महत्व यथेष्ट होगा।

निम्न स्तर पर ही देखें तो हम पाते हैं कि जब कभी एक शिक्षक कक्षा में किए गए लिखित कार्य का चयन करता है और सर्वोत्तम काम को कक्षा में दिखाता है तभी सही अर्थों में एक पत्रिका का निर्माण हो रहा होता है। ऐसे कार्य के लिए केवल आलोचनात्मक कथन तथा प्रशंसा की आवश्यकता होती है— ठीक किसी फोटोग्राफ के शीर्षक की तरह। पत्रिका में संपादकीय इसी भूमिका को अदा करता है।

इस तरह स्कूल पत्रिका प्रतिभा-खोज अस्त्र की तरह काम कर सकती है। पत्रिका विद्यार्थी को अपनी पत्रकारिता अभिरुचि को अभिव्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है और इसके द्वारा अध्यापक भी स्कूल के भावी लेखकों की झलक पा सकता है।

यह सचमुच दुःख की बात है कि हमारे शिक्षा आयोजकों द्वारा इस तथ्य पर गंभीरता से नहीं सोचा गया है। स्कूल में हम देखने की कोशिश करते हैं कि कौन अच्छा खिलाड़ी बन सकता है, कौन अच्छा वक्ता या विद्यार्थी बन सकता है लेकिन यह जानने की बहुत कम कोशिश की जाती है कि कौन अच्छा लेखक बन सकता है। स्कूल पत्रिका के द्वारा विकास करते बच्चों की योग्यता तथा उनकी क्षमता को आंका जा सकता है।

स्कूल पत्रिका के उद्देश्य

बिना किसी स्पष्ट उद्देश्य तथा नीति के स्कूल पत्रिका उस पानी के जहाज की भांति है जिसका कोई गंतव्य नहीं। ऐसी पत्रिका की कोई सुनियोजित राह नहीं होती और फलस्वरूप शून्य में खो जाना ही इसकी नियति है। यह कभी विद्यार्थी-समुदाय की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकती।

स्कूल पत्रिका स्कूल की सेवा करती है, स्कूल के अध्यापक वर्ग को शिक्षित करती है और विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार से लाभान्वित करती है, जैसे :

(1) प्रकाशित किया जाने वाला लेखन, विद्यार्थी को विशेष रूप से स्पष्ट तथा संक्षेप रूप में लिखने की प्रेरणा देता है।

(2) विद्यार्थियों को कार्टून, पोस्टर तथा चित्र आदि बनाने का अनुभव प्राप्त होता है।

(3) अध्यापक-वर्ग परस्पर मिलकर कार्य करना सीखते हैं, एक दूसरे के कार्य की महत्ता को पहचानना सीखते हैं (यह एक प्रकार की योग्यता है जिसे जानना अध्यापकों के लिए वांछनीय है)।

(4) एक सुचारु रूप से संपादित पत्रिका विद्यालय की एक सुन्दर संस्कृति का विकास करती है, तथा उसमें नए-नए रंग भरती है।

(5) स्कूल पत्रिका में जो कुछ भी प्रकाशित होता है उससे अभिभावकों को विद्यालय के शैक्षिक क्रिया-कलापों की झलक मिलती है और उन्हें बच्चों पर खर्च किये जाने वाले पैसे के औचित्य की जानकारी भी मिलती है।

(6) विद्यार्थियों के लेखन को प्रकाशित करने से स्कूल पत्रिका उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।

अस्तु, एक स्कूल पत्रिका स्पष्टतया, एक उपभोक्ता पत्रिका से अलग है। इसमें कुछ बातें साफ तौर पर अपेक्षित हैं :

(1) इसे किसी संस्था द्वारा समर्थित होना चाहिए, उदाहरणार्थ—स्कूल द्वारा।

(2) यह विद्यालय के शिशु की भांति है, इसलिए यह विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही है।

(3) एक प्रकाशक के रूप में भी कार्य करते हुए विद्यालय प्रकाशन व्यवसाय में नहीं होता और पत्रिका की व्यावहारिक दुनियां से पूरी तरह अप्रभावित रहता है।

(4) जब तक वित्तीय स्थितियां बाध्य न करें, पत्रिका में किसी प्रकार के विज्ञापन स्वीकृत नहीं होने चाहिएं।

(5) पत्रिका को चलाने के लिए वित्तीय सहायता, सदस्य-फीस के रूप में अथवा स्कूल के बजट से प्राप्त की जानी चाहिए। पत्रिका से अर्थ-प्राप्ति अपेक्षित नहीं है। दूसरे शब्दों में यह व्यावसायिक कार्य नहीं है, केवल यहां सही अर्थों में शैक्षिक अनुभव है।

एक अच्छी स्कूल पत्रिका के प्रकाशन की उपादेयता तभी संभव हो सकती है जब यह विद्यार्थियों के रचनात्मक लेखन कार्य का आधार बने।

स्कूल पत्रिका की शुरुआत बहुत साधारण तरीके से होनी चाहिए, जिसमें प्रारम्भिक रूप में विद्यालय के क्रिया-

कलापों का एक लेखा-जोखा हो। धीरे-धीरे अध्यापक वर्ग विद्यालयों तथा विद्यार्थियों के सामूहिक सहयोग से यह अधिकतर विद्यालयों के लिए वास्तविक उद्देश्य की ओर बढ़ सकती है।

नीति

व्यावसायिक पत्रिकाओं की तरह, सुसंपादित स्कूल पत्रिका में भी निम्नलिखित नीतियों को परिभाषित किए जाने की आवश्यकता है :

(1) इसे (स्कूल पत्रिका) स्कूल परियोजनाओं के हित में कार्य कर रहे स्कूल की प्रबंध समिति की यथोचित सहायता करनी चाहिए।

(2) इसे हमेशा उच्च स्तर और निष्कपट भावना को बनाए रखने की कोशिश करनी चाहिए और स्कूल के अन्दर के किसी भी व्यक्तिगत वैर व द्वेष से दूर रहना चाहिए। स्कूल के अंदर चल रहे किसी भी विवाद को इसमें प्रकाशित नहीं किया जाना चाहिए।

(3) पत्रिका के संपादक अथवा प्रबंधकों को कभी भी ऐसे लेखों को प्रकाशित नहीं करना चाहिए जो स्कूल के क्रिया-कलापों से अनभिज्ञ लोगों पर स्कूल के बारे में एक गलत प्रभाव छोड़ें।

(4) इसे प्रत्येक मौलिक रचना को पूरा मान देना चाहिए।

(5) इसे हमेशा सही भाषा का प्रयोग करना चाहिए और इसकी प्रत्येक रचना में अभिव्यक्ति का सुंदर अंदाज होना चाहिए।

(6) संपादकों तथा प्रबंधकों को अपनी नहीं बल्कि दूसरों के शान और सम्मान के लिए कार्य करना चाहिए।

उक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि स्कूल पत्रिका का प्रकाशन इतना आसान नहीं है जितना प्रतीत होता है। पिछले अनुच्छेदों में जिन सावधानियों का जिक्र किया गया है, उनके अतिरिक्त कुछ और ध्यान देने योग्य बातें हैं, जिनकी स्कूल पत्रिका के प्रकाशन में उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। स्कूल पत्रिका का प्रकाशन मजाक नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण है पाठकों से इसका संप्रेषण।

प्रत्येक स्कूल पत्रिका के अपने विशेष पाठक होते हैं। इसके लाभ भी हैं और हानियां भी। लाभ इसलिए कि संपादकों को अपने पाठकों की पहचान होती है और वे बिना किसी विस्तृत खोज के जैसा कि प्रायः व्यावसायिक पत्रिकाएं करती हैं अपने पाठकों की आदतों, अभिरुचियों के मुताबिक उन्हें पठनीय सामग्री प्रदान करते हैं। दूसरा लाभ यह भी है कि स्कूल पत्रिका को वितरण-प्रसार की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि यह अपने विशेष पाठकों तक ही सीमित होती है।

लेकिन इसका एक विलोम पहलू भी है। हानि इसलिए कि इसके पाठक सहज सुलभ्य हैं। पत्रिका निःशुल्क है, अतः पाठकों को यह मिलनी ही है। फलस्वरूप संपादकों तथा प्रकाशन से सम्बद्ध लोगों की इसमें अभिरुचि कम होने की संभावना हर समय बनी रहती है। पाठक क्या चाहता है इस ओर ध्यान न देकर संपादक पाठकों को एक प्रकार से भूल जाता है और पाठकों को क्या पढ़ना चाहिए, इस दिशा में सोचकर पत्रिका का कायाकल्प कर देता है। इस प्रकार पत्रिका प्राप्त होने पर भी पाठक उस पर ध्यान नहीं देता और उसे रद्दी की टोकरी में फेंक सकता है।

इस तथ्य में सबसे बड़ा कारण यह है कि प्रायः स्कूल पत्रिका के प्रबंधक तथा संपादक ऐसे लोग होते हैं जिन्हें पत्रकारिता तथा प्रकाशन का कोई विशेष ज्ञान तथा अनुभव नहीं होता और फलस्वरूप पत्रिका का संपादन गुणवत्ता की दृष्टि से बहुत कमजोर और हल्का पड़ जाता है। स्वाभाविक है, इसके प्रति पाठक की अभिरुचि समाप्त हो जाती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इसमें प्रकाशित सामग्री उच्च और व्यावसायिक स्तर की हो, तथा संपादन ग्राह्य हो।

संपादक की खोज

स्कूल पत्रिका के प्रकाशन-व्यवसाय में योग्य लोगों के बावज़ूद भी, संपादक की भूमिका महत्वपूर्ण है क्योंकि वास्तव में वही इसका निर्माता होता है। समस्त जटिल क्रिया-फलक के केन्द्र में संपादक होता है जो प्रारम्भ से अन्त तक जब तक पत्रिका पाठकों के हाथ में पहुंचती है, सारे कार्यों का बारीकी से संचालन तथा निरीक्षण करता है।

अतः उस अध्यापक के बारे में जो स्कूल पत्रिका का कार्य सुचारु रूप से कर सकता है, कुछ शब्द कहना अप्रासंगिक नहीं होगा :

(1) एक अच्छे संपादक की सर्वप्रथम योग्यता यही है कि उसके पाठक क्या चाहते हैं, इसका उसे ज्ञान हो।

(2) जिस व्यक्ति को संपादक का कार्य भार सौंपा जाए उसमें ऐसी संपादकीय परख तथा योग्यता हो कि वह स्वयं निर्णय ले सके और किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी को वहन करने की इच्छा-शक्ति वाला हो। संपादकीय परख में कल्पना तथा गहन सोच-विचार की आवश्यकता होती है। यह एक ऐसा गुण है जो संपादक को रूढ़िगत परम्पराओं को तोड़ने, शुष्क और टूटे हुए तरीकों को हिलाने में तथा नवीन मूल्यों और मानदंडों को खोजने में सहायक होता है। ऐसा संपादक हमेशा अपने पाठकों की सोच के मुताबिक चलकर उनकी विचारधारा का सम्मान करता है।

एक संपादक को खूबसूरत और उत्तम आवरण में ढकी हल्की और सतही लेखन-सामग्री की तथा साधारण ढंग से प्रस्तुत मगर सार्थक बातों की पहचान होनी चाहिए। यदि संपादक में यह गुण नहीं है तो पत्रिका संपूर्ण रूप से कमजोर, साधारण तथा बिना किसी चरित्र के होगी।

कल्पना-क्षमता

एक अच्छा संपादक पत्रिका के पृष्ठों में प्रकाशित लेखन-सामग्री की छवि को आंकने में समर्थ होता है। उसके मस्तिष्क में यह चित्रित हो जाना चाहिए कि बिना किसी चित्र अथवा पूरक सामग्री के लगातार पृष्ठ, पाठक की आंख को शुष्क और बोझिल बना देंगे। उसे यह पूर्व जानकारी होनी चाहिए कि एक ही पृष्ठ में तरह-तरह के चित्र पाठक को परेशान व निराश कर देते हैं। बड़े या छोटे या किस आकार के अक्षर कहां और क्यों छपने चाहिएं, इस बात की पूर्ण जानकारी संपादक को होनी चाहिए। इन सारी बातों में संपादक की कल्पना-क्षमता का परिचय मिलता है।

निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार कार्य की योग्यता

पत्रिका-प्रकाशन की प्रक्रिया ऐसी है कि आपको हमेशा लगेगा कि समय बहुत कम है और कार्य पूरा नहीं हो पाया है। संपादक ऐसा होना चाहिए जो निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार समय पर कार्य करने वाला हो और काम की अनिवार्यता को पूरी लगन से महसूस करे। जो स्वयं को अक्षम पाते हों ऐसे लोग दुःखी, असमर्थ और अकुशल संपादक सिद्ध होते हैं।

एक संपादक प्रकृति और पोषण का सम्मिश्रण होता है। स्वभावगत योग्यताओं में कुछ गुण होते हैं जिन्हें प्रत्येक संपादक को आत्मसात करना चाहिए :

(1) **संप्रेषण की योग्यता** : कोई भी स्कूल पत्रिका सुन्दर लेखन, कुशल चित्रकारी तथा स्वस्थ संपादकीय के बावजूद जब तक पाठकों को ग्राह्य न लगे, स्थायित्व प्राप्त नहीं कर सकती और जिन्दा नहीं रह सकती। पत्रिका के प्रत्येक पृष्ठ पाठक से बातचीत करते हुए लगें इसके लिए संपादक जहां तक संभव हो सके, संप्रेषण की सभी कलाओं का प्रयोग करता है। वह कोशिश करता है कि पत्रिका की सामग्री केवल सही और दिलचस्प ही नहीं हो बल्कि पाठक को महत्वपूर्ण, प्रभावपूर्ण और विशेष रूप से स्वयं उससे सम्बन्ध रखने वाली लगे। ऐसा लगे कि पत्रिका उन पर बात न कर रही हो, बल्कि उनसे बात कर रही हो।

(2) **भाषा ज्ञान की योग्यता** : एक संपादक जिसे अपने भाषा-ज्ञान की सीमाओं का ज्ञान है, बुरा है लेकिन वह जिसे नहीं है वह चीन की दुकान के उस लोकोक्तीय बैल की तरह है जो जहां जाता है अनर्थ ही करता है। संपादक शब्दकार की तरह काम करता है,उसे अपने प्रयोग किए गए शब्दों पर विश्वास होना चाहिए, सहज और प्रभावशाली ढंग से भाषा के प्रयोग की योग्यता होनी चाहिए।

(3) **चित्रकारिता के सिद्धान्तों का ज्ञान** : सफल संपादक के लिए प्रकाशन-कला एक अनुलाभ है। अनाकर्षक रूपरेखा किसी भी सुन्दर पठनीय सामग्री को प्रभावहीन बना सकती है। इसलिए संपादक में एक संतुलित दृष्टि होनी चाहिए ताकि अक्षर-विन्यास, छपाई आदि सुन्दर लगें।

(4) **स्कूल पत्रिका के प्रकार** : "जहां चाह है, वहां राह है", यह उक्ति स्कूल पत्रिका के प्रकाशन में पूरी तरह चरितार्थ होती है। आवश्यकता है केवल साधनों की, कार्यकर्ताओं की प्रतिबद्धता तथा उनकी तकनीकी योग्यता और दिलचस्पी की।

भित्ति-समाचारपत्र

पत्रिका कार्य प्रारम्भ करने का एक बढ़िया तरीका भित्ति-समाचार पत्र की शुरूआत है। पश्चिम में अधिकतर स्कूल ऐसा करते हैं और परिणामतः यदि छोटी कक्षाओं को भित्ति सामाचार-पत्र को तैयार करने का अभ्यास कराया जाय तो एक तरह से हम देखते हैं कि भविष्य में निकलने वाली स्कूल-पत्रिका के लिए संपादक स्वयं ही दक्ष रहे होते हैं। बहुत से तरीके हैं जिनके द्वारा ऐसे समाचार-पत्र तैयार किये जा सकते हैं।

एक तरीका है कि बच्चों की एक संपादकीय समिति नियुक्त की जाए और अध्यापकों की देखरेख में एक समाचारपत्र निकाला जाए और इसकी सामग्री साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक या जैसी इच्छा हो, उस रूप में संकलित हो।

डुप्लिकेटिंग मशीन द्वारा पत्रिका का प्रकाशन

ऊपर मैंने कहा है कि जहां चाह है वहां राह है। इस बात में सच्चाई है जबकि नियमित रूप से निकलने वाली पत्रिका के प्रकाशन में वित्तीय साधनों की कमी एक रुकावट बन जाए लेकिन फिर भी किसी न किसी रूप में पत्रिका प्रकाशित हो रही हो, चाहे डुप्लिकेटिंग मशीन के द्वारा ही (जो प्रायः प्रत्येक स्कूल किसी तरह उपलब्ध कर सकता है)।

पत्रिका के प्रकाशन के लिए डुप्लिकेशन के अन्य तरीकों व साधनों के मुकाबले कुछ वास्तविक लाभ हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि बिना किसी परेशानी के पत्रिका के प्रकाशन की समस्त प्रक्रिया का संपादन कक्षा के भीतर ही किया जा सकता है। दूसरे, डुप्लीकेशन सबसे सस्ता तरीका भी है और तीसरे, इस बात को ध्यान में रखते हुए भी कि स्कूल में कार्य कर रहे लोगों का व्यावसायिक प्रकाशकों से बहुत कम संपर्क होता है। डुप्लीकेशन प्रक्रिया भी इतनी आसान है कि कोई भी विद्यार्थी थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त करने के बाद मशीन को चला सकता है।

पत्रिका

यदि कार्य करने की इच्छा-शक्ति है तो स्कूल-पत्रिका एक टैब्लाइड (पत्रिका) का रूप धारण कर सकती है, चाहे बजट अथवा वित्तीय साधन अवरोधक बन कर खड़े हों। "टेब्लाइड" शब्द दवाई की गोली (टेब्लेट) से बना है जिसका अर्थ है किसी भी वस्तु का परिमाण और मात्रा में संघनित होना। इसमें 15 इंच लम्बे चार या पांच कालम हो सकते हैं। स्कूल प्रबंध समिति या संपादकीय बोर्ड की इच्छा पर निर्भर है कि वे केवल चार पृष्ठ प्रकाशित करें। पत्रिका किस साइज की हो यह उपलब्ध सूचना व सामग्री तथा किस रफ्तार से आप इसका प्रकाशन चाहते हैं, इन बातों को देखते हुए निश्चित किया जा सकता है।

वार्षिक पुस्तिका

स्कूल पत्रिका के बारे में की गई उक्त बातें इस विचार पर आधारित हैं कि विश्व पत्रिका की परिभाषा के अनु-

सार यह लेखों की पुस्तक पत्रिका है। लेकिन सर्वसाधारण रूप में स्कूल-पत्रिका वह पत्रिका है जो केवल वर्ष-भर में एक बार प्रकाशित होती है और इस प्रकार इसे वार्षिक पुस्तिका अथवा पत्रिका की संज्ञा दी जा सकती है।

इस वार्षिक पत्रिका के उद्देश्य हैं :

(1) स्कूल के पूरे वर्ष का एक सुखद संस्मरणात्मक स्वरूप प्रदान करना।

(2) संपूर्ण वर्ष का एक ऐतिहासिक रिकार्ड।

(3) स्कूल में विद्यार्थियों की दिलचस्पी बढ़ाना तथा स्कूल के प्रति उनकी निष्ठा का विकास करना।

(4) विद्यार्थियों के उच्च शैक्षिक क्रिया-कलापों को आधार प्रदान करना।

स्कूल पत्रिका की स्थिति अब लघु तथा गौण नहीं है। इस विषय पर काफी गहराई और गंभीरता से सर्वेक्षण करने की आवश्यकता है। स्कूल पत्रिका की भूमिका और उसके कार्य-क्षेत्र का पूरे विस्तार के साथ परिभाषित करना अनिवार्य है। इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि प्रतिभाओं को खोज कर उनके अंदर छुपी हुई नैसर्गिक लेखन-कला का विकास करने के लिए एक मंच प्रदान करना ही शिक्षण-नियोजकों का कार्य नहीं है। बल्कि इस कार्य को गंभीरता और मुस्तैदी से आगे बढ़ाना चाहिए क्योंकि राष्ट्रीय जीवन के लगभग प्रत्येक फलक में आज योग्य तथा प्रशिक्षित लोगों की कमी अनुभव की जा रही है और संभवतः विकास की प्रक्रिया में यह बात सबसे बड़ी बाधक है। आर्थिक रूप से हम कमजोर तथा गरीब हैं ही लेकिन दक्षता तथा योग्यता की दृष्टि से हम और भी अधिक कमजोर हैं। हमें यह चेतावनी हर समय याद रखनी चाहिए—आधुनिक दुनियां में शासन निरपेक्ष है, संपूर्ण है—कोई भी जाति जो दक्षता प्राप्त ज्ञानशक्ति की कीमत को नहीं समझती, उसका पतन अवश्यंभावी है।

□□

शैक्षिक पत्रकारिता—समाचार-पत्रों में लेखन के पक्ष में

☐ डा० आर० सी० श्रीवास्तव

जैसा कि आज समाचार पत्रों का एक विशाल और विविध पाठक वर्ग है, एक लेखक जो शैक्षिक समस्याओं को गंभीरता से लेता है और अपने विचारों को बहुत बड़े जन-समुदाय तक पहुंचाना चाहता है उसे समाचार-पत्रों में केवल शैक्षिक लेखों का ही सहारा लेना चाहिए। गांधी जी ने हरिजन पत्रिका में लेख लिखकर शिक्षा में अपने विचारों को प्रचारित किया और वे ही विचार बाद में बेसिक शिक्षा के रूप में हमारे सामने आए और प्रचलित हुए।

अधिकतर लोगों में अपने विचारों को दूसरों के साथ बांटने की प्रवृत्ति होती है। कभी समान विचार वालों के साथ और कभी विरोधी विचार वालों के साथ भी प्रायः उनमें बातचीत करने की इच्छा होती है। यह विचार-विमर्श कभी व्यक्तिगत रूप में तथा कभी सार्वजनिक रूप में होता है और इसके लिए अनेकों तरीके प्रयोग में लाए जा सकते हैं। शैक्षिक पत्रकारिता एक ऐसा ही तरीका है, माध्यम है। शैक्षिक पत्रकारिता से मेरा मतलब सार्वजनिक विचार-विमर्श से ही है जिसके द्वारा प्रकाशित पुस्तक, पत्रिका तथा समाचार-पत्र के रूप में शैक्षिक समस्याओं, विचारों और सूचनाओं का प्रचार-प्रसार होता है।

उक्त तीन प्रकाशित माध्यमों में समाचार-पत्र सबसे अधिक वितरित होते हैं तथा पढ़े जाते हैं क्योंकि ये सस्ते होते हैं और सब तरह के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा सभी शिक्षित लोगों की पहुंच के भीतर होते हैं। फलस्वरूप आज की दुनियां में बहुत कम पढ़े-लिखे लोग हैं जो सुबह के समाचार-पत्र की एक झलक देखे बिना अपना दैनिक कार्य शुरू करते हों। प्रायः लोग सुबह की चाय के प्याले के बजाय समाचार-पत्र लाने वाले व्यक्ति की बेताबी से प्रतीक्षा करते हैं। वर्तमान समाज में समाचार-पत्र के प्रति लोग अत्यधिक आसक्त हो गए हैं। इनमें प्रकाशित लेख इतने अधिक दिलचस्प, विवादशील और लोकरुचिपूर्ण होते हैं कि समाचार पत्रों का प्रसार निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। जहां एक ओर इससे समाचार-पत्र उद्योग में आय बढ़ती जा रही है, रोजगार बढ़ रहा है और जनता में आम जागृति आ रही है, दूसरी ओर लेखकों को भरपूर प्रसिद्धि मिलने के साथ-साथ उनकी आय भी बढ़ रही है। यह आवश्यक नहीं है कि शैक्षिक समस्याओं पर लिखा जाने वाला प्रत्येक लेख वास्तव में विद्वत्तापूर्ण और शास्त्रीय ही हो। यदि लेख लोकरुचिपूर्ण है तो यह समाचार-पत्र का मुख्य आलेख बन जाता है और लोगों में विवादशील अथवा विचारपूर्ण बातों को समझने-विचारने में सहायक बन जाता है।

जैसा कि आज समाचार पत्रों का एक विशाल और विविधि पाठक वर्ग है, एक लेखक जो शैक्षिक समस्याओं को गंभीरता से लेता है और अपने विचारों को बहुत बड़े जन-समुदाय तक पहुंचाना चाहता है उसे समाचार-पत्रों में केवल शैक्षिक लेखों का ही सहारा लेना चाहिए। गांधी जी ने हरिजन पत्रिका में लेख लिखकर शिक्षा में अपने विचारों को प्रचारित किया और वे ही विचार बाद में बेसिक शिक्षा के रूप में हमारे सामने आए और प्रचलित हुए। उन्होंने शैक्षिक पत्रकारिता को एक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया और भारतीय शिक्षा के निर्माण में अपने विचारों को प्रसारित करने का साधन बनाया। उन्होंने अपने शिक्षा संबंधी विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए कभी भी किसी जटिल वैज्ञानिक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति का सहारा नहीं लिया। उन्होंने हमेशा साधारण भाषा के प्रयोग द्वारा तथा तर्कसंगत और प्रेरक तरीकों द्वारा अपनी बात को लोगों तक पहुंचाया।

समाचार-पत्र और पत्रकारिता की विशिष्ट बोलचाल में किसी लेख के बजाय किसी कहानी के लेखन को अधिक प्राथमिकता दी जाती है। यह शायद इसलिए कि कहानी अधिकतर लोगों को पसंद आती है और लेख अपनी अधिकता के कारण मात्र खपत के लिए होते हैं। पत्रकारिता ढंग के समाचार पत्र तथा साप्ताहिक पत्रिकाएं उनमें प्रकाशित लेखों के स्वरूप के आधार पर शैक्षिक पत्रिकाओं से भिन्न होती हैं। समाचार-पत्र और साप्ताहिक पत्र जो आम पाठकों के लिए होते हैं, उनसे अलग पुस्तकें और शैक्षिक पत्रिकाएं किसी विशिष्ट पाठक वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं क्योंकि उनकी अपेक्षाएं अलग तरह की होती हैं। ऐसे पाठक एक निश्चित दृष्टिकोण के हिमायती नहीं होते बल्कि वे शैक्षिक प्रश्नों और समस्याओं पर एक शास्त्रीय विश्लेषण की अपेक्षा करते हैं। प्रस्तुतीकरण का ढंग कैसा है, उससे वे अपने निष्कर्ष निकालते हैं। एक शैक्षिक पत्रिका ग्रामतौर पर लोकरुचिपूर्ण नहीं होती। इसमें किसी भी लेख को लिखने के लिए विद्वता और मेहनत चाहिए जो आमतौर पर समाचार-पत्रों के लेखों में नहीं दिखाई देती। शैक्षिक पत्रिकाओं की ग्राह्यता उन लेखों के द्वारा होती है जो समय और स्थान से परे भी स्वीकार्य होते हैं तथा जो अनुसंधान की विषय-वस्तुओं जैसे वैज्ञानिक-विश्लेषण, परिकल्पनाओं की अवधारणा और उनके प्रयोग आदि की निर्देशिका के रूप में लिए जा सकते हैं।

लेखों के विद्वत्तापूर्ण महत्त्व का मूल्यांकन उनके प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होने पर किया जाता है। शैक्षिक पत्रिकाएं कालांतर में प्रतिष्ठित होती हैं जब उनमें लगातार ठोस, वैज्ञानिक, रचनात्मक और रिसर्च के लिए उपयोगी लेख प्रकाशित होते रहते हैं। लेखकों की शैक्षिक योग्यता का आकलन प्रायः ऐसी पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके लेखों की संख्या से किया जाता है। लेकिन जब कोई भी आम पाठक इन पत्रिकाओं पर ध्यान नहीं देता और विद्वान लोग जो प्रायः अपने ही शैक्षिक विषयों पर केन्द्रित रहते हैं, बहुत कम इन पत्रिकाओं को पढ़ने की कोशिश करते हैं, तब कोई ग्राश्चर्य नहीं कि इन पत्रिकाओं का प्रकाशन पांच सौ प्रतियों से अधिक नहीं हो पाता ग्रौर यह मात्र शिक्षा-संस्थाओं तक ही सीमित रह जाती हैं। 10 जनवरी, 1985 के 'स्टेट्समैन' समाचार-पत्र में प्रकाशित सर्वेक्षण-रिपोर्ट के अनुसार आमतौर पर लोग पुस्तकों—विशेष रूप से गंभीर विषयों की पुस्तकों के प्रति उदासीन होते हैं। स्टेट्समैन को उद्धृत करें—"अतिरिक्त पढ़ने की बात दूर रही, अधिकतर लोग अपने ही विषय के ज्ञान को परिष्कृत और ताजा बनाए रखने की चिन्ता नहीं करते और कितने ही अध्यापक हैं जिन्हें अपने ही विशिष्ट शिक्षा-क्षेत्र का ज्ञान नहीं होता। अक्सर लोग एक ऐसा कैप्स्यूल चाहते हैं जिसमें सम्पूर्ण विश्व समाहित हो। उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति सामयिक विषयों वाले चटपट मसाले से हो जाती है।"

जब शिक्षित लोग वह नहीं पढ़ते जो उन्हें पढ़ना चाहिए और आम पाठक केवल सामयिक चटपटे लेखों में ही दिलचस्पी लेते हों, जब बहुत कम शिक्षित लोगों में ही शैक्षिक पत्रिकाओं को पढ़ने की या उनमें लेख लिखने की चाह हो और इस प्रकार पत्रिका का प्रकाशन बहुत अधिक पीछे चला जाय जिसमें लेख 6 महीने से 3-4 साल के ग्रंतराल के बाद प्रकाशित हो रहे हों और जब सामाजिक विज्ञान विषयों—विशेष रूप से शिक्षा एवं मानव

विज्ञान जैसे विषयों में अधिक पत्रिकाएं उपलब्ध न हो रही हों, तब निश्चय ही समाचारपत्र शैक्षिक विचारों के प्रचार-प्रसार का सशक्त माध्यम बन जाता है। समाचार-पत्रों में प्रकाशित शैक्षिक लेख 'संपादक के नाम पत्र' कालम द्वारा विचार-विमर्श हेतु एक मंच प्रदान करते हैं जो प्रायः शैक्षिक पत्रिकाओं में नहीं होता। समाचार-पत्रों में शिक्षा संबंधी लेख लिखने के कई लाभ हैं। कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को बहुत अधिक लोगों तक जिनमें अच्छे विद्वान लोग भी शामिल हैं, पहुंचा सकता है और एक रात में ही एक लेखक की हैसियत से प्रसिद्धि पा सकता है। एक विश्वविद्यालय में किसी अच्छे पद के लिए साक्षात्कार के दौरान किसी उप-कुलपति ने शैक्षिक पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों की परवाह न करते हुए किसी उम्मीदवार के शैक्षिक लेख का जिक्र इस तरह किया—"ओह, मैंने भी समाचार-पत्र में उसका लेख पढ़ा है।" समाचार पत्र लेखों के दूरगामी परिणाम होते हैं। वे सभी का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हैं और उसी के साथ प्रारम्भ हो जाती है प्रसिद्धि की प्रक्रिया और शिक्षण संबंधी समस्याओं पर गहन, वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए किसी मंच पर उनकी मांग। लेकिन गहन विश्लेषण और अध्ययन की किसको परवाह है। इसलिए समाचार-पत्र और उनमें लिखे लेखों तक ही सीमित रहें।

□□

समाचार-पत्र और प्रत्रकारिता की विशिष्ट बोल-चाल में किसी लेख के बजाय किसी कहानी के लेखन को अधिक प्राथमिकता दी जाती है। यह शायद इसलिए कि कहानी अधिकतर लोगों को पसंद आती है और लेख अपनी अधिकता के कारण मात्र खपत के लिए होते हैं। पत्रकारिता ढंग के समाचार पत्र तथा साप्ताहिक पत्रिकाएं उनमें प्रकाशित लेखों के स्वरूप के आधार पर शैक्षिक पत्रिकाओं से भिन्न होती हैं।

शैक्षिक पत्रकारिता में प्रशिक्षण

□ डा० टी० रामामूर्ति

समाचार पत्रों द्वारा शिक्षा संबंधी समाचारों का प्रकाशन बहुत कम है। केवल "हिन्दू" पत्र को छोड़ कर देश के किसी भी दैनिक अंग्रेजी समाचार पत्र के पास शैक्षिक संवाददाता नहीं है और न शिक्षा संबंधी बातों के लिए कोई एक "कालम" ही। वास्तव में अधिकतर समाचार-पत्रों में संवाददाताओं का शिक्षा से कोई संबंध ही नहीं है। बहुधा समाचार-पत्रों में किसी विश्वविद्यालय, कालिज अथवा स्कूल का जिक्र ही तब आता है जब विद्यार्थियों या अध्यापक वर्ग द्वारा हड़ताल या आंदोलन जैसी कोई बात घटित होती है।

शैक्षिक पत्रकारिता एक अनाथ बच्चे की तरह रही है जिसकी ओर न पत्रकारों ने और न पत्रकार शिक्षकों ने ध्यान दिया है। यद्यपि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग आदि जैसी शिक्षा संस्थाओं द्वारा पूर्णरूपेण शिक्षा के मामलों से संबंधित पत्रिकाओं का प्रकाशन कर कुछ प्रशंसनीय प्रयास किए गए हैं, फिर भी शैक्षिक पत्रकारिता की एक प्रभावी विषय के रूप में अभी कोई पहचान नहीं बन पाई है।

शैक्षिक पत्रकारिता के स्तर की दो धरातलों पर व्याख्या की जा सकती है:

(1) स्कूल, कालिज तथा विश्वविद्यालय स्तर पर शैक्षिक पत्रकारिता में प्रयोग एवं शिक्षण,

(2) सार्वजनिक तथा निजी संस्थाओं द्वारा शैक्षिक पत्रिकाओं का प्रकाशन।

साफ तौर से देखें तो हम पाते हैं कि स्कूल तथा कालिज स्तर पर पत्रकारिता में प्रयोग एवं शिक्षण की जो छवि है, वह निराशाजनक है। बहुत कम साधन संपन्न स्कूल हैं जो ऐसी वार्षिक पत्रिकाएं निकालते हैं, जिनमें मुख्यतया साहित्यिक अथवा अर्ध-साहित्यिक लेख होते हैं अन्यथा विभिन्न प्रकार के ग्रुप फोटो, बड़े-बड़े नाम व संदेशों के साथ पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है जो स्कूल के दिनों की एक यादगार के रूप में होती हैं और उसमें पत्रकारिता जैसी कोई बात नहीं होती। उनका प्रकाशन कार्यकाल भी अनियमित होता है और अन्य कारणों के साथ-साथ धन की उपलब्धि पर आधारित होता है। ऐसी पत्रिकाओं की एक सूची-तैयार करने के मेरे सारे प्रयत्न निष्फल हो गए क्योंकि किसी भी केन्द्रीय ऐजेन्सी द्वारा ऐसी पत्रिकाओं का रिकार्ड रखने का कार्य नहीं किया जाता है।

कालिज स्तर पर भी यह स्थिति कोई विशेष अच्छी नहीं है। कालेजों द्वारा भी ऐसे रचनात्मक कार्य किए जाने के विशेष प्रयत्न नहीं किए जाते। इसके कुछ स्पष्ट कारण

हैं जैसे साधनों की कमी, इन विशेष कामों को करने के लिए दक्ष मानव-शक्ति की कमी, आदि। इस समस्या का मूल कारण यह है कि स्कूल तथा कालिज स्तर पर पत्रकारिता प्रशिक्षण पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता, यहां तक कि पाठ्येतर गतिविधि के रूप में भी नहीं।

कम से कम विश्वविद्यालय-स्तर पर स्थिति थोड़ी अच्छी है जहां पत्रकारिता जन-संप्रेषण एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। अधिकतर विभाग जो स्नातक तथा स्नातकोत्तर-स्तर पर पत्रकारिता और जन-संप्रेषण विषय पढ़ाते हैं, प्रयोगशाला पत्रिकाएं निकालते हैं ताकि विद्यार्थियों को पत्रकारिता के विभिन्न पक्षों में व्यावहारिक प्रशिक्षण मिल सके।

सार्वजनिक और निजी शैक्षिक संस्थाओं और संगठनों द्वारा कुछ अच्छे अनुसंधान और विद्वतापूर्ण शैक्षिक पत्रिकाओं का (बहुत बड़ी संख्या में बुलेटिन अथवा न्यूजलेटर के अलावा) प्रकाशन हुआ है। इनमें शामिल हैं जैसे—इंडियन एजूकेशनल रिव्यू, जनरल आफ इंडियन एजूकेशन, जनरल आफ हायर एजूकेशन, एजूकेशन क्वार्टरली, सेनबोसेक आदि। इन संस्थाओं द्वारा किया गया यह प्रयत्न निःसंदेह प्रशंसनीय है। लेकिन हमारे देश में शिक्षा क्षेत्र में जो अपेक्षाएं हैं, आवश्यकताएं हैं वह बहुत अधिक और बहुरंगी हैं और उसमें अभी बहुत कुछ होना शेष है।

समाचार-पत्रों द्वारा शिक्षा संबंधी समाचारों का प्रकाशन बहुत कम है। केवल 'हिन्दू' पत्र को छोड़ कर देश के किसी भी दैनिक अंग्रेजी समाचार-पत्र के पास शैक्षिक संवाददाता नहीं है और न शिक्षा संबंधी बातों के लिए कोई एक 'कालम' ही। वास्तव में अधिकतर समाचार-पत्रों में संवाददातों का शिक्षा से कोई ताल्लुक ही नहीं है। बहुधा समाचार-पत्रों में किसी विश्वविद्यालय, कालिज अथवा स्कूल का जिक्र ही तब आता है जब विद्यार्थियों या अध्यापक वर्ग द्वारा हड़ताल या आंदोलन जैसी कोई बात घटित होती है। दीक्षांत भाषण या दूसरे समारोहों से संबंधित समाचार भी समाचारपत्रों में स्थान पा लेते हैं पर शिक्षा से संबंधित विषय समाचार-पत्रों में यदा-कदा ही गंभीर विचार-विमर्श का रूप धारण कर पाते हैं। हां, सरकार द्वारा हाल ही में की गई घोषणा में जो शिक्षानीति में परिवर्तन की बात कही गई है, उससे अवश्य ही पिछले चंद महीनों में समाचारपत्रों में शिक्षा संबंधी लेखों के प्रकाशन में बढ़ोतरी हुई है। लेकिन अभी भी बजाय किसी विषय पर गंभीर विचार-विमर्श के प्रायः भाषणों की रिपोर्टिंग पर अनावश्यक रूप से जबर्दस्ती समाचार-पत्रों में स्थान दिया जाता है। इससे साफ जाहिर होता है कि भारतीय पत्रकारिता पर राजनीति और राजनीतिज्ञों का दबदबा है और यह सब सामाजिक, आर्थिक और विकास संबंधी गतिविधियों की कीमत पर हो रहा है यानी समाचारपत्रों में इन महत्वपूर्ण गतिविधियों पर कोई महत्व नहीं दिया जा रहा है। निःसंदेह ऐसी स्थिति के लिए शिक्षा-मनीषी और पत्रकार दोनों ही दोषी ठहराये जा सकते हैं। अधिकतर शिक्षा संस्थाएं आलोचना से घबराती हैं और पत्रकारों से दूर भागती हैं। दूसरी ओर पत्रकार भी इतने दक्ष नहीं हैं कि शिक्षा संबंधी समस्याओं का गहराई से अध्ययन कर कुछ यथार्थ, विश्वसनीय और प्रामाणिक लेख लिख सकें जो शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे लोगों को लाभप्रद सिद्ध हो सकें। शिक्षित लोग भी शायद यही सोचते हैं कि पत्रकारों का काम केवल दोष निकलना है और वे किसी भी रूप में सही सलाहकार नहीं हैं जैसा कि वास्तव में उन्हें होना चाहिए।

भारत में शैक्षिक पत्रकारिता प्रभावकारी है। देश में लगभग एक सौ विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा और अनुसंधान में कार्य कर रहे राष्ट्रीय संस्थान हैं, हजारों की संख्या में कालिज तथा स्कूल हैं अतः शैक्षिक पत्रकारिता को एक मुख्य विषय के रूप में विकसित करने के अच्छे अवसर हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अर्थपूर्ण ढंग में शिक्षा संबंधी प्रश्नों और समस्याओं पर व्यापक बातचीत हो और इसके लिए पत्रिकाओं और मगज़ीन आदि का प्रकाशन कर उनका खूब प्रसार-प्रचार हो। पत्रकारिता में प्रशिक्षण देने की भी आवश्यकता है। इसके लिए स्कूल

स्तर से ही कम से कम इसे पाठ्येतर गतिविधि के रूप में प्रारम्भ किया जा सकता है।

शिक्षण विषय के रूप में पत्रकारिता में बहुत सीमित रूप में अध्ययन किया गया है हालांकि विश्वविद्यालय स्तर पर पत्रकारिता-शिक्षा की स्थिति के ऊपर कुछ सामग्री उपलब्ध है। जहां तक मुझे ज्ञात है कि एक विषय पर पेपर के रूप में पत्रकारिता-शिक्षण अधिकतर स्कूल तथा कालेजों में पाठ्यक्रम के अंदर नहीं है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि पत्रकारिता का अधिकतर स्कूल तथा कालेजों में वार्षिक पत्रिका या समय-समय पर मैगज़ीन के प्रकाशन के रूप में ही अभ्यास किया जाता है।

बच्चों में पत्रकारिता के प्रति अभिरुचि पैदा करने के लिए एक तरीका यह है कि स्कूल स्तर से ही कक्षा-अभ्यास के रूप में समाचार-पत्रों का पठन प्रारम्भ किया जाना चाहिए। (कोई प्रश्न पूछ सकता है कि जिस ढंग से कुछ समाचार-पत्र संपादित तथा प्रकाशित होते हैं, क्या उन्हें छोटी आयु के बच्चों को पढ़ना उचित है ? यह एक महत्वपूर्ण ही नहीं, अति दुरूह और सूक्ष्म प्रश्न है, इस पर किसी अन्य बैठक में बातचीत की जा सकती है) पत्रकारिता के प्रति अभिरुचि पैदा करने से मेरा अभिप्राय बच्चों में जिज्ञासा, एक विवेकपूर्ण सोच और जानकारी तथा विश्वसनीयता की भावना का विकास है। अनुकूल स्थितियों में स्कूल तथा कालिज स्तर पर पत्रकारिता-शिक्षा से बहुत सारे उद्देश्यों की प्राप्ति हो सकती है—जैसे विद्यार्थी एक समझदारी के साथ समाचार-पत्रों को पढ़ सकते हैं, रोजमर्रा की घटनाएं किस तरह लोगों तक पहुंचती हैं और समाचार पत्र के प्रकाशन में क्या-क्या विधियां तथा प्रक्रियाएं प्रयोग में लाई जाती हैं इन सबके प्रति उनके मन में एक उत्सुकता और प्रशंसा भरा भाव पैदा होता है।

लोकतांत्रिक ढांचे में जन-संप्रेषण इकाई की भूमिका और उसके कार्य क्या हैं, इस संबंध में बच्चों को उचित शिक्षा दी जा सकती है और उन्हें समाचार-पत्र पढ़ने, रेडियो सुनने और टेलीविजन के सुन्दर कार्यक्रम देखने के लिए प्ररित किया जा सकता है। इस योग्यता के साथ ही यदि बच्चे के अंदर पत्रकारिता के बारे में थोड़ी सी भी जानकारी हो तो निश्चित रूप से लोकतांत्रिक समाज में जन-संप्रेषण की क्या रचनात्मक भूमिका होनी चाहिए, इस बारे में उसकी एक व्यक्तिगत विचारधारा बन जाती है। ऐसे प्रशिक्षण से विद्यार्थियों में कुछ वांछनीय विशेषताएं आ जाती हैं जैसे विशुद्धता, गहराई से किसी विषय-वस्तु का आकलन करना, स्वयं की विचारधारा का निर्माण (जो प्रायः आज हमारे मात्र भाषणों से भरी कक्षा द्वारा संभव नहीं है), सतर्कता और आत्मविश्वास। एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह भी है कि विद्यार्थियों में किसी भी प्रकार की सूचना अथवा जानकारी का उचित मूल्यांकन तथा व्याख्या करने की योग्यता होनी चाहिए और उसे मौखिक अथवा लिखित रूप में साफ, सही और सुन्दर ढंग से संप्रेषित करने की प्रभावी कला होनी चाहिए। मैं महसूस तो करता हूं कि जब मैं ये सारी बातें कह रहा हूं तो स्कूल के विद्यार्थियों से आवश्यकता से अधिक अपेक्षा कर रहा हूं, लेकिन हमें एक शुरूआत तो करनी ही चाहिए और शुरूआत की सर्वोत्तम अवस्था स्कूल ही है। धीरे धीरे इस प्रकार का प्रशिक्षण कालिज तथा विश्वविद्यालय स्तर तक अनवरत रूप से चल सकता है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् जैसी राष्ट्रीय संस्थाएं इस दिशा में एक कार्य कर सकती हैं कि वे स्कूल तथा कालिज स्तर पर शिक्षकों का चयन करें जो इस प्रकार का प्रशिक्षण विद्यार्थियों को दे सकें और गहन प्रशिक्षण हेतु उन्हें ग्रीष्मकालीन शिविरों में भी परस्पर मिलने का अवसर प्रदान कर सकें। ये शिक्षक धीरे-धीरे उनमें पत्रकारिता के प्रति अभिरुचि तथा अन्य विशेषताओं को पैदा करने की शुरूआत कर सकते हैं।

देश में लगभग 25 विश्वविद्यालय विभाग हैं जहां स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर पत्रकारिता में शिक्षण होता है। अधिकतर विभाग विद्यार्थियों को अच्छे पत्रकार, जनसंपर्क अधिकारी आदि बनने का प्रशिक्षण देते हैं। यद्यपि कितने ही विभागों में विज्ञान-पत्रकारिता, कृषि-

पत्रकारिता, विकास-पत्रकारिता आदि ऐच्छिक विषय हैं लेकिन अभी शैक्षिक पत्रकारिता इस कोटि में नहीं है। पत्रकारिता पाठ्यक्रम में विशेष विषय के रूप में शिक्षा संबंधी लेखन को भी अभी मान्यता नहीं मिली है। यह शायद इसलिए है कि विश्वविद्यालय में पत्रकारिता-विभागों तथा शिक्षा के विभागों में रचनात्मक तादात्म्य की कमी है। पत्रकारिता की अत्यधिक प्रभावकारिता तथा सामाजिक आवश्यकता को देखते हुए इन विभागों को परस्पर मिलकर कार्य करना चाहिए ताकि देश में पत्रकारिता पाठ्यक्रम का सर्वोत्तम ढांचा तैयार हो सके। ऐसे कदम से और इस संबंध में समय-समय पर खुली बात-चीत से लोगों को शिक्षा संबंधी प्रमुख विषयों पर सही जानकारी मिलेगी। यह कदम इसलिए भी श्रेयस्कर होगा कि शिक्षा को लेकर जितने भी दार्शनिक और नीतिपरक प्रश्न हैं उन पर अध्ययन और विश्लेषण हो सकता है।

□□

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् जैसी राष्ट्रीय संस्थाएं इस दिशा में एक कार्य कर सकती है कि वे स्कूल तथा कालिज स्तर पर शिक्षकों का चयन कर जो इस प्रकार का प्रशिक्षण विद्यार्थियों को दे सके और गहन प्रशिक्षण हेतु उन्हें ग्रीष्म-कालीन शिविरों में भी परस्पर मिलने का अवसर प्रदान कर सके। ये शिक्षक धीरे-धीरे उनमें पत्र-कारिता के प्रति अभिरुचि तथा अन्य विशेषताओं को पैदा करने की शुरुआत कर सकते हैं।

25 फरवरी से 1 मार्च 1985 तक जयपुर में शैक्षिक पत्रकारिता गोष्ठी में स्वीकृत सिफारिशें

अनुसंशाएं

(1) बी०एड० स्तर पर थ्योरी तथा प्रायोगिक कार्यक्रमों में संबद्ध अथवा प्रासंगिक विषय एवं कला का समावेश करते हुए अनिवार्य रूप से शैक्षिक पत्रकारिता की शुरूआत की जानी चाहिए। स्कूल-पत्रिका, भित्ति-पत्रिका आदि की रचना प्रस्तुति पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

(2) एम० एड० तथा स्नातकोत्तर (शिक्षा) स्तर पर शैक्षिक पत्रकारिता को ऐच्छिक अथवा वैकल्पिक विषय के रूप में प्रारंभ किया जाना चाहिए। जहां तक संभव हो सके, ऐसा पाठ्यक्रम शिक्षा तथा पत्रकारिता प्रभागों के सदस्यों के संयुक्त प्रयास से आयोजित किया जाना चाहिए। शैक्षिक पत्रिकाओं के प्रकाशन पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

(3) सभी विश्वविद्यालयों तथा जन-संचार में प्रशिक्षण दे रही संस्थाओं में शैक्षिक पत्रकारिता को बी० जे०, एम० जे० तथा पत्रकारिता प्रभाग में पत्रकारिता के अन्य पाठयक्रमों में ऐच्छिक या वैकल्पिक प्रश्न-पत्र के रूप में शुरू किया जाना चाहिए।

(4) स्कूल तथा कालिज अध्यापकों के लिए अल्पकालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिएं ताकि उन्हें कालिज-पत्रिका, घरेलू-पत्रिकाएं आदि के प्रकाशन के लिए आवश्यक ज्ञान एवं दक्षता प्राप्त हो सके।

(5) शिक्षक-प्रशिक्षकों के लिए अल्प-कालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिएं ताकि वे बी० एड० तथा एम० एड० स्तर पर शैक्षिक पत्रकारिता से संबंधित आवश्यक बातों का सफल शिक्षण कार्य कर सकें।

(6) पत्रकारों में शिक्षा-समस्याओं, नीतियों तथा प्रयोगों आदि के प्रति रचनात्मक प्रतिबद्धता के विकास के लिए तथा एक सामाजिक परिपेक्ष्य के निर्माण के लिए अल्प-कालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिएं।

(7) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के साथ शिक्षा के लिए क्षेत्रीय प्रलेख-पोषण केन्द्रों की अधिकाधिक स्थापना की जानी चाहिए। प्रत्येक क्षेत्र में प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी, हिन्दी या अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के शैक्षिक लेखों का अनुवाद कर, सार-संक्षेप रूप में उनका भली-भांति केन्द्रों में संकलन होना चाहिए। यदि संभव हो इस कार्य के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाए और इस प्रकार समय-समय पर अंग्रेजी हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में व्यापक "शैक्षिक डाइजस्ट" का प्रकाशन किया जाना चाहिए।

(8) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को राज्य स्तर की संस्थाओं के साथ

विभिन्न भाषाओं में 'अनुवाद पत्रिकाओं' का प्रकाशन करना चाहिए। इनमें देश की तमाम प्रमुख शैक्षिक पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों के अनुवाद शामिल किए जाने चाहिएं।

(9) इच्छुक व्यक्तियों से शैक्षिक लेखों को लेकर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को एक केन्द्रीय निकाय का निर्माण करना चाहिए और फिर देश की विभिन्न पत्रिकाओं में उसके वैशिष्ट्य और संपादकीय प्राथमिकताओं के आधार पर उनके वितरण का प्रबंध करना चाहिए। इससे जहां अतिरिक्त मेहनत और उसकी आवृत्ति तथा फालतूपन से बचा जा सकेगा, वहां प्रचार-प्रसार में भी मदद मिलेगी।

(10) देश की विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं के संपादकों को एक साथ मिलाकर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को एक 'संपादक मंच' का गठन करना चाहिए। यह मंच पत्रिकाओं की विषय वस्तु तथा प्रकाशन के स्तर के निश्चित मानदंडों को बनाए रखने के लिए कुछ मार्गदर्शक नियमों को बना सकता है।

(11) एक केन्द्रीय शैक्षिक समाचार-एजेन्सी की शुरूआत की जानी चाहिए। यह एजेन्सी देश के विभिन्न संचार-साधनों जैसे—प्रेस, रेडियो, टेलीविजन तथा अन्य शैक्षिक पत्रिकाओं के लिए समाचार और लेख उपलब्ध करा सकती है।

(12) शैक्षिक संस्थाओं तथा मीडिया के बीच एक घनिष्ठ संबंध स्थापित किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जन-संपर्क जैसी एक कार्य-प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए।

(13) शिक्षा संस्थाओं तथा पत्रकारिता संस्थाओं में एक गहरा संबंध स्थापित किए जाने की आवश्यकता है। इससे शैक्षिक पत्रकारिता में शिक्षा की अंतःशक्ति और उसके गुणों का लाभ उठाया जा सकता है।

(14) शिक्षा और मीडिया के बीच में जो एक अलगाव है उसे दूर किया जाना चाहिए ताकि शैक्षिक संवाददाताओं की, लेखकों की बहुत देर से अनुभव की जा रही आवश्यकता पर उचित ध्यान दिया जा सके।

□□

25-29 मार्च 1985 तक गंगटोक में शैक्षिक पत्रकारिता गोष्ठी में स्वीकृत सिफारिशें

अनुसंशाएं

(1) शैक्षिक पत्रकारिता के विकास के लिए प्रथम चरण के रूप में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् तथा राज्य शिक्षा संस्थाओं के साथ मिलकर राष्ट्रीय स्तर पर देश की सभी स्कूल पत्रिका तथा शैक्षिक-पत्रिकाओं का एक व्यापक सर्वेक्षण का बीड़ा उठाना चाहिएं।

(2) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद तथा राज्य शिक्षा संस्थाओं के द्वारा स्कूल तथा कालिज पत्रिका तैयार करने की कला में शिक्षकों के लिए सभी राज्यों में एक श्रृंखलाबद्ध आवश्यकतानुरूप कोर्स आयोजित किए जाने चाहिएं।

(3) शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कोर्स आयोजित करने के तुरन्त बाद ही नियमित रूप से तथा समय-समय पर पुनः प्रशिक्षण कोर्स का प्रावधान आवश्यक है। इससे अनवरत रूप से स्कूल पत्रिका तैयार करने की एक प्रक्रिया बनी रहती है।

(4) शैक्षिक पत्रिकाओं से संपादन तथा उत्पादक का कार्य कर रहे व्यक्तियों के लिए अल्प-कालिक सेवा-कालीन प्रशिक्षण कोर्स तेजी से आयोजित किए जाने चाहिएं ताकि उनमें आवश्यक व्यावसायिक दक्षता और विशेषज्ञता का विकास हो सके।

(5) विभिन्न विशेष शिक्षा विषयों में जमा दो तथा प्रथम डिग्री स्तर तक के कोर्स में पत्रकारिता को प्रारम्भ किया जाना चाहिए।

(6) स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर शैक्षिक पत्रकारिता शिक्षक-प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में शामिल की जा सकती है।

(7) शिक्षा नीतियों, कार्यक्रमों, अभिनव प्रयोगों तथा वर्तमान प्रवृत्तियों आदि के प्रचार-प्रसार के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को मॉडल के रूप में एक नियमित शैक्षिक पत्रिका के प्रकाशन पर विचार करना चाहिए। यह कदम शिक्षकों और शिक्षक प्रशिक्षकों को शैक्षिक पत्रकारिता की कला में व्यावहारिक दक्षता प्राप्त करने में उपयोगी होगा।

(8) शैक्षिक पत्रकारिता के उद्देश्य को अर्थपूर्ण ढंग से विकसित करने के लिए तथा क्षेत्र विशेष की शैक्षिक उन्नति को प्रकाश में लाने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में जिला तथा ब्लाक स्तर पर पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाना चाहिए।

(9) शिक्षा संबंधी सूचनाओं के संकलन तथा नियमित रूप से उसे प्रसारण-साधनों को उपलब्ध

कराने के उद्देश्य से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् तथा राज्य शिक्षा संस्थानों में एक उपयोगी ढांचे की स्थापना की जानी चाहिए।

(10) प्रसारण साधनों से जुड़े लोगों को शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे विकास कार्यक्रमों में शामिल किया जाना चाहिए ताकि वे अभिनव प्रयोग तथा विकास कार्यक्रमों से परिचित हो सकें और वे शैक्षिक समाचारों को एक रचनात्मक रूप दे सकें।

(11) विद्यालय तथा शिक्षक प्रशिक्षण स्तर पर शैक्षिक पत्रकारिता को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से स्कूल मेगज़ीन के लिए राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर एक योजना शुरू की जानी चाहिए। यह योजना गोष्ठी, पठन कार्यक्रम जैसे आधार पर ही शुरू की जा सकती है।

(12) सीमित रूप में ही सही, कुछ संस्थाएं जैसे—विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, आई० सी० एस० एस० आर० तथा राज्य शिक्षा विभाग शैक्षिक पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। इस सहायता को स्कूल तथा कालिज पत्रिका तथा छोटे-छोटे शैक्षिक समाचार-पत्रों के हित के लिए बढ़ाया जाना चाहिए।

□□

शैक्षिक पत्रकारिता गोष्ठी, जयपुर

सार

(1) स्कूल पत्रिका की प्रकृति और प्रकार से लेकर शिक्षा में समाचार-पत्रों की रिपोर्टिंग तक शैक्षिक पत्रकारिता के विभिन्न आयामों को लेकर गोष्ठी में लगभग 30 पेपर प्रस्तुत किए गए।

(2) काफी संख्या में विद्यार्थी-पत्रकार तथा पर्यवेक्षकों के अतिरिक्त लगभग 30 प्रतिभागी गोष्ठी के ग्रुप कार्य में शामिल हुए और उन्होंने गोष्ठी को विचारात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण बनाया। इन लोगों में मीडिया स्कूल के विशेषज्ञ, शैक्षिक पत्रिकाओं में कार्यरत पत्रकार तथा जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, उत्तर-प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, दिल्ली तथा चण्डीगढ़ के राज्यों प्रबुद्ध लेखक तथा शिक्षक-प्रशिक्षक शामिल थे।

(3) विचार-विमर्श हेतु चार कार्यकारी समूह बनाए गए। विषय थे—शैक्षिक पत्रकारिता व्यावहारिक परिभाषा; स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर शिक्षक-प्रशिक्षण में शैक्षिक पत्रकारिता के सार-तत्व का विकास, शैक्षिक पत्रकारिता के प्रकाशन में अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए अल्पकालिक सेवा-कालीन कोर्स तथा शैक्षिक अनुसंधान पत्रिकाओं तथा लक्ष्यपूर्ण शैक्षिक पत्रिकाओं का विकास।

(4) विभिन्न लेखों तथा समूह कार्यों पर विचार-विमर्श के परिणामस्वरूप शैक्षिक पत्रकारिता के स्तर के विकास के लिए काफी संख्या में सुझाव तथा सिफारिशें सामने आईं।

□□

"भारतीय आधुनिक शिक्षा" में अब तक प्रकाशित रचनाओं का विवरण

प्रथम वर्ष
जुलाई 1983, (प्रवेशांक)

क्र० सं०	रचना	रचनाकार
1.	शैक्षिक परिवर्तन : प्रत्यय विश्लेषण	: रामशकल पाण्डेय
2.	कक्षा में कमज़ोर बच्चों की मदद के लिए कुछ सुझाव	: सुदेश मुखोपाध्यय
3.	भारतीय शिक्षा में शैक्षिक तकनीकी	: मोतीलाल शर्मा एवं उम्मेद सिंह
4.	वैज्ञानिक खोज की प्रक्रिया तथा उसका शैक्षणिक पक्ष	: कुंवर वहादुर सिंह
5.	प्रारंभिक विद्यालयों के छात्रों के घर के पर्यावरण का अध्ययन	: आर. एन. त्रिपाठी एवं जे. एस. ग्र वाल
6.	अध्यापक शिक्षा में अनुसंधान प्रवृत्तियां	: आर. एस. शुक्ल
7.	विकलांग एकीकृत शिक्षण	: डी. पी. सिंह
8.	पर्यावरण और विज्ञान शिक्षण (एक प्रायोजना का अनुभव)	: जे. एस. राजपूत
9.	विश्वबन्धुत्व का नया आयाम : संगीत शिक्षा	: कृष्णा माहेश्वरी
10.	विषय चयन और शोध अध्ययन	: जमनालाल बायती
11.	छात्रों द्वारा बी. एड. में प्रवेश लेने के कारणों का अध्ययन	: चन्द्रपाल सिंह चौहान
12.	शिक्षक प्रशिक्षण में मापन तथा परीक्षण	: एस. पी. कुलश्रेष्ठ

अक्टूबर 1983

क्र० सं०	रचना	रचनाकार
13.	ग्रामीण विकास में शिक्षा राजनीति एवं जनसंचार साधनों की भूमिका का सर्वेक्षण	: राजपाल सिंह
14.	सृजनात्मकता और शिक्षाक्रम	: साहब सिंह
15.	समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में प्राचीन भारतीय नारी शिक्षा की यथार्थता	: सौभाग्यवती सिंह
16.	आर्थिक परिस्थिति और सर्जनशीलता	: शंकर शरण श्रीवास्तव
17.	संगठनात्मक वातावरण तथा शैक्षिक उपलब्धि	: कमला राय
18.	जीवन पर्यन्त शिक्षा क्या, क्यों और कैसे ?	: सुशील प्रकाश गुप्ता
19.	समाजमूलक शिक्षा और विकास कार्यक्रमों में विश्वविद्यालयों की भूमिका	: मोतीलाल शर्मा
20.	सामान्य एवं विशेषज्ञ शिक्षा प्रशासक	: जमनालाल बायती

क्र० सं०	रचना	रचनाकार
21.	मानव विज्ञान में बाल्यावस्था का महत्व	: सूर्य कुमार श्रीवास्तव
22.	जनजाति छात्रों के पिछड़ेपन के कारण और उनका निदान	: खेमराज शर्मा

जनवरी 1984

23.	प्रेमचन्द : शिक्षा के संदर्भ में	: जयपाल तरंग
24.	यूनेस्को और विकासशील देशों का सांस्कृतिक भविष्य	: ताज रावत
25.	अध्यापन व्यवसाय के प्रति विश्वविद्यालीय छात्रों की अभिवृत्ति	: प्रभाकर सिंह
26.	विकालांग तथा सामान्य छात्र-मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन	: आभा माथुर
27.	ओपन बुक परीक्षा—एक विकल्प	: एस. एन. एल. भार्गव
28.	शिक्षा में समान अवसर—समस्या एवं समाधान	: जमनालाल बायती
29.	खिलाड़ी तथा न खेलने वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि एवं व्यक्तिगत समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन	: उम्मेद सिंह
30.	बहुकक्षा-शिक्षण हेतु स्वाध्यायी अधिगम सामग्री का समाजोपयोगी उत्पादक दृष्टि से निर्माण हेतु प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षक संस्था में कार्य योजना	: कैलाश चन्द्र बंसल
31.	भाषा शिक्षण में हिन्दी की समस्याएं : एक सर्वेक्षण	: उषा जयसवाल
32.	शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य	: रामदत्त शर्मा

अप्रैल 1984

33.	पठन योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धि	: शीला भगोलीवाल
34.	अशाब्दिक बौद्धिक निष्पादन और विद्यालय वातावरण	: करुणा शंकर मिश्र
35.	प्राथमिक अध्यापकों की समस्याएं और अभिवृत्ति	: जी. एस. असवाल
36.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति	: महेश देउस्कर
37.	नारी की स्थिति में सुधार	: इन्दिरा कुलश्रेष्ठ
38.	शिक्षा प्रक्रिया में कार्य का महत्व	: कुंवर राजेन्द्र पाल सिंह
39.	पाठशाला सुधार के दिशा सूचक	: मुल्कराज चिलाना
40.	व्याकरण और भाषा शिक्षण	: इन्द्र सेन शर्मा
41.	+2 स्तर पर शिक्षा की स्थिति	: विजय पाल गर्ग
42.	10+2+3 : कितने लाभ कितने दोष	: उषा वत्स लाडली

द्वितीय वर्ष

जुलाई 1984

1. प्रौढ़ शिक्षा के बदलते आयाम एवं सतत शिक्षा : लक्ष्मी मिश्रा
2. ग्रामीण शिक्षा : परिवर्तन के मुद्दे : उमराव सिंह चौधरी
3. जनसंख्या शिक्षण और राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण : राजेन्द्र सिंह
4. मानवीय मूल्य की शिक्षा और राष्ट्रीय उत्थान : एस. पी. अहलूवालिया एवं महेश देउस्कर
5. योग-दर्शन के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पक्ष : एस. सी. शुक्ल
6. दक्षता-निर्धारित अध्यापक शिक्षा : प्रभाकर सिंह
7. अनौपचारिक शिक्षा की सर्वमान्य धारणा : हरचरण लाल शर्मा
8. लिखित अभिव्यक्ति-विभिन्न पक्ष और शिक्षा : इन्द्रसेन शर्मा

अक्टूबर 1984

9. मिडिल स्तरीय कुछ विज्ञान प्रत्ययों का अध्ययन : रामनिवास गुप्ता एवं रेणु रस्तोगी
10. शिक्षाक्रम नियोजन और अनुसंधान : जी. एल. अरोड़ा एवं मधुलिका श्रीवास्तव
11. विद्यालय निरीक्षण-पर्यवेक्षण की समस्या : एन. कुंवर
12. नैतिक शिक्षा के नये आयाम : यादवेन्द्र शरण सिंह
13. विद्यालय में अनुशासन : रामफल
14. सृजनात्मकता के लिए शिक्षा : जमनालाल बायती
15. विकालांगों की शिक्षा : एक कार्य योजना : रामस्वरूप शर्मा
16. नेत्रहीन बच्चों के लिए पूरक शिक्षा और शिक्षण साधन : हरमेश लाल
17. डा० जाकिर हुसेन की चरित्र-निर्माण की संकल्पनाएं : कुंवर राजेन्द्रपाल सिंह
18. हमारे जीवन में मानचित्र का महत्त्व : इक़बाल मोहीउद्दीन

जनवरी 1985

19. इस्लाम दर्शन और शिक्षा : कृष्णा माहेश्वरी
20. विज्ञान शिक्षण पर सफलतम प्रयोग : भंवर नागदा
21. अध्यापक की प्रत्याशाएं और छात्रों की उपलब्धियां : शीला भगोलीवाल
22. शिक्षा में निर्देशन का महत्व : कौशल्या पाहूजा
23. ध्यान द्वारा मानसिक तनाव से मुक्ति : लक्ष्मीचन्द राका
24. महिलाओं में साक्षरता एवं सामाजिक चेतना : सुषमा जैन एवं एस. पी. अहलुवालिया
25. भारत में माँ और बच्चे का स्वास्थ्य : रामसिंह कंचन
26. घर और स्कूल की निकटता : द्वारकेश भारद्वाज
27. किशोरों में मताग्रहिता : उषा नैय्यर एवं सुरेन्द्र मोहन नैय्यर
28. विद्यालयों में पुस्तकालयों का महत्व : इन्द्र सेन शर्मा
29. राष्ट्रीय पुरस्कृत शिक्षकों का बहुपार्श्व चित्र : अनिल

अप्रैल 1985

30. राष्ट्रीय शिक्षा नीति	: उषा भार्गव
31. शिक्षा पद्धति की एकरूपता	: रामदास राठी
32. विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन	: जमनालाल बायती
33. पर्यावरण और अध्यापन कौशल	: सरला राजपूत
34. पठन-पाठन में गृहकार्य की समीक्षा	: सुशीला शर्मा
35. विद्यालय पलायन के कारण	: गोपाल सिंह नयाल
36. भाषा शिक्षण में कहानी पद्धति	: प्रभाकर सिंह
37. शिक्षण प्रतिमान में शोध की आवश्यकता	: श्रीनिवास पाण्डेय
38. शिक्षण कौशल का संयुग्मन	: त्रिभुवन सिंह एवं प्रभाकर सिंह
39. स्नातकोत्तर स्तर पर आंतरिक एवं बाह्य अंकों का अध्ययन	: मथुरेश्वर पारीक

□□

इस अंक के रचनाकार

डा० द्वारिका नाथ खोसला	: अकादमिक सम्पादक एवं प्रवाचक, पत्रिका प्रकोष्ठ, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली
डा० भंवर सुराणा	विशेष संवाद्दाता, हिन्दुस्तान दैनिक, जयपुर
श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट	: संपादक, नवज्योति (हिन्दी), जयपुर
डा० संजीव भानावत	: सहायक प्रोफेसर, पत्रकारिता विभाग, पत्राचार अध्ययन : संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
श्रीमती शशि प्रभा गोयल	: प्रवक्ता, राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली
डा० मनोहर प्रभाकर	: संयुक्त निदेशक, जनसंपर्क कार्यलय, जयपुर
श्री रवीन्द्र भारती	: पत्राचार अध्ययन संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
श्री राजेश माथुर	: राजस्थान पत्रिका, जयपुर
श्री सत्य प्रकाश शर्मा	: शिविरा पत्रिका कार्यालय (शिविरा पत्रिका), बीकानेर
श्री जी० एस० जौली	: कॉलेज ऑफ वोकेशनल स्टडीज, शेख सराय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
डा० आर० सी० श्रीवास्तव	: प्रवाचक, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
डा० टी० रामामूर्ति	: पत्रकारिता तथा जनसंप्रेषण विभाग, बनारस हिन्दु विश्व-विद्यालय, वाराणसी
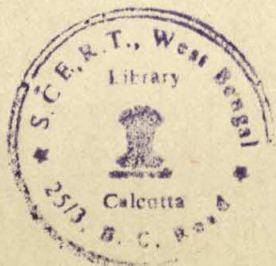
भारतीय आधुनिक शिक्षा : नियमावली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित **भारतीय आधुनिक शिक्षा** एक त्रैमासिक प्रकाशन है। इसका प्रकाशन **जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्तूबर** माह में किया जाता है।

पत्रिका के कुछ प्रमुख स्तम्भ इस प्रकार हैं :

शैक्षणिक अनुसंधान और शिक्षा में नये प्रयोग

शिक्षा दर्शन

शिक्षा मनोविज्ञान

वर्तमान शिक्षा की समस्याएं

पाठ्यक्रम एवं प्राविधि संबंधी नवीन विकास

अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा जगत

राष्ट्रीय शैक्षिक प्रगति

विभिन्न राज्यों में शिक्षा की स्थिति

शिक्षाशास्त्रियों में भेंटवार्ता

नवाचार

पुस्तक समीक्षा

प्रधान सम्पादक : राजेन्द्रपाल सिंह

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-110016 के लिए श्री सी० रामचन्द्रन, सचिव द्वारा प्रकाशित तथा स्वतन्त्र भारत प्रैस, दिल्ली में मुद्रित।

रजि० नं० 42912/84

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING